योगासन

श्री स्वामी शिवानन्द

दिव्य जीवन सङ्घ प्रकाशन

श्री स्वामी शिवानन्द शताब्दी प्रकाशन-माला—द्वितीय पुष्प

योगासन

परम पूज्य श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

योगासन

: लेखक :

श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

: अनुवादिका :

डा० स्वर्णलता अग्रवाल,

एम. ए. (संस्कृत, हिन्दी), पी-एच डी.

: प्रकाशक :

दिव्य जीवन सङ्घ,

पो० शिवानन्दनगर–२४९ १९२,

जिला टिहरी-गढ़वाल (उत्तर प्रदेश), हिमालय।

मूल्य] १९८२ [दश रुपये

'डिवाइन लाइफ सोसायटी' के लिए श्री स्वामी कृष्णानन्द जी द्वारा प्रकाशित तथा श्री घनश्याम किशोर गर्ग द्वारा 'किशोर प्रिन्टर्स, ५७, रेलवे रोड, ऋषिकेश - २४९ २०१, जिला देहरादून, उ० प्र०,' में मुद्रित ।

प्रथम हिन्दी संस्करण – १९८२

: प्राप्ति-स्थान :

शिवानन्द प्रकाशन संस्थान,
दिव्य जीवन सङ्घ,
पो. शिवानन्दनगर, जिला टिहरी-गढ़वाल (हिमालय), उ. प्र., भारत
पिन २४९ १९२

प्रकाशकीय वक्तव्य

योगासनों को जो महत्ता प्राप्त हुई है उसका द्विविध स्वरूप है । ये केवल चतुर्मुखी शारीरिक व्यायामों का ही समूह नहीं हैं बल्कि योगाभ्यास के लिए प्रारम्भिक सोपान हैं । चित्त की उच्चतर एकाग्रता हेतु आवश्यक मानसिक सन्तुलन के साथ शारीरिक शुद्धता को समन्वित करने के लिए आसनों की इन प्रविधियों का हठयोग और राजयोग—दोनों में प्रावधान है । यद्यपि पातञ्जल योगदर्शन में किसी विशिष्ट आसन का उल्लेख नहीं है जो ध्यानाभ्यास के लिए अपेक्षित हो, परन्तु हठयोग में शरीर को स्वस्थ रखने एवं उसकी प्रक्रिया में तारतम्य (*Rhythm*) बिठाने के लिए विभिन्न आसनों पर बल दिया गया है, जिससे प्राणायाम के अभ्यास द्वारा प्राण-प्रवाह में सन्तुलन तथा समता लाने की सूक्ष्मतर प्रक्रिया में ये सहायक हो सकें । इस प्रकार योगासन प्रमुख योग के लिए आधारशिला का कार्य करते हैं ।

इस पुस्तक के रचयिता ब्रह्मनिष्ठ स्वामी शिवानन्द जी महाराज परम तत्त्व पर ध्यान केन्द्रित करने के प्रधान योग के क्रमिक स्तरों के रूप में विभिन्न योगों को समन्वित करने के लिए विख्यात हैं । उन्होंने प्रस्तुत पुस्तक में सरल और स्वाभाविक ढङ्ग से योगासनों का वर्णन किया है जिससे इस विद्या को न जानने वाले भी इन्हें समझ सकें ।

इसमें उच्च प्राविधिक (*Technical*) विवरणों का समावेश जानबूझ कर नहीं किया गया है जिससे सामान्य जन भी सरलता से लाभान्वित हो सकें और उनके लिए साधारण सांसारिक स्तर से ऊपर उठने का पथ प्रशस्त

हो सके । महत्त्वपूर्ण आसनों के चित्र अलग से दिये गये हैं, फिर भी किसी प्रशिक्षक के मार्गदर्शन में ही आसन सीखना उचित होगा ।

श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज जैसी दिव्य विभूति द्वारा रचित इस ग्रन्थ को हिन्दी में उपलब्ध कराने की अभीप्सा दीर्घ काल से अनुभव की जा रही थी । आशा है, योग के जिज्ञासु एवं जनसाधारण इस हिन्दी रूपान्तरण का प्रसन्नतापूर्वक स्वागत करेंगे ।

—दिव्य जीवन सङ्घ

भूमिका

मैं सहस्रों बार उस ब्रह्म को करबद्ध प्रणाम करता हूँ जो शरण में आने वाले के समस्त भय, दुःख और विक्षेपों को नष्ट करने वाला है, जो अजन्मा होते हुए भी अपनी महान् शक्ति से अवतार लेता हुआ प्रतीत होता है, जो अचल होते हुए भी क्रियावान् लगता है, जो यद्यपि एक है ('एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म'), परन्तु उन लोगों को अनेक रूप धारण किये प्रतीत होता है जिनकी दृष्टि मिथ्या दृश्यों की अनन्त विभिन्नता को देखने से धुँधली पड़ गयी है ।

हे आदिनाथ भगवान् शिव ! सर्वप्रथम मैं आपको प्रणाम करता हूँ जिन्होंने महान् राजयोग की प्राप्ति के सोपान-रूप में पार्वती जी को हठयोग सिखाया था ।

गोरक्ष और मत्स्येन्द्र भली प्रकार हठयोग जानते थे । योगी स्वात्माराम ने उनकी कृपा से ही यह योग उनसे सीखा । योग की इस शाखा को जो नहीं जानते, हठयोग सीखने में जो असमर्थ हैं, अत्यन्त दयालु स्वात्माराम योगी उन्हें हठविद्या का प्रकाश प्रदान करते हैं ।

जीवन का लक्ष्य आत्मानुभूति है । भारतीय दर्शन की सभी पद्धतियों का एक ही लक्ष्य है—पूर्णता द्वारा आत्मा की मुक्ति ।

प्रत्येक मनुष्य सुख चाहता है, दुःख से घृणा करता है ; परन्तु सुख-प्राप्ति का उपाय कोई नहीं सिखाता । सुख की खोज मानव का निजी स्वभाव है—अन्तर्प्रकृति है । मनुष्य की निजी प्रकृति में आनन्द निहित है ।

इच्छाओं की पूर्त्ति से चित्त की शान्ति प्राप्त नहीं हो सकती यद्यपि उससे इन्द्रियों को क्षणिक तृप्ति अनुभव होती है। जिस प्रकार अग्नि पर घी डालने से अग्नि प्रज्वलित होती है उसी प्रकार विषय का भोग करने से इच्छाएँ बढ़ती हैं तथा मन अधिकाधिक अशान्त होता है। जो पदार्थ समय, दूरी और कारण से सीमित होने के कारण नाशवान् और अनित्य हैं उनसे यथार्थ स्थायी सुख की आशा कैसे की जा सकती है?

. . . .

इन्द्रिय-सम्बन्धी पदार्थों से प्राप्त सुख नाशवान् और क्षणिक होता है। दार्शनिक के लिए यह कदापि सुख नहीं है—यह खुजली खुजाने के समान है। ऐन्द्रिक सुख के साथ असीमित थकान, पाप, भय, पीड़ा, चिन्ता और अनेक बुराइयाँ उत्पन्न हो जाती हैं।

. . .

सांसारिक कार्यकलापों में अत्यन्त व्यस्त रहते हुए भी जीवन में कुछ ऐसे शान्ति के क्षण भी आते हैं, जब मन क्षणभर के लिए दूषित सांसारिकता से ऊपर उठ कर जीवन की उच्चतर समस्याओं पर मनन करता है—'मैं कौन हूँ? कहाँ से, और क्यों आया हूँ? इस ब्रह्माण्ड का अस्तित्व क्यों है?' आदि। गम्भीर जिज्ञासु अपने चिन्तन का दायरा बढ़ा लेते हैं। वे सत्य को समझने के प्रयत्न में जुट जाते हैं। उनके मानस में विवेक का उदय होता है और वे आत्मज्ञान-सम्बन्धी पुस्तकों के अध्ययन में रत हो जाते हैं, मनन करते हैं, ध्यान करते हैं तथा अन्ततोगत्वा चित्त-शुद्धि कर के आत्मा के उच्चतम ज्ञान को प्राप्त कर लेते हैं। किन्तु जिनका मन सांसारिक वासनाओं और उत्कण्ठाओं से विक्षिप्त रहता है, वे ज्ञानपरक साधना से उपेक्षा-भाव रखते हुए राग-द्वेष की लहरों के बहाव में आ जाते हैं और सांसारिक चक्र में जन्म-मरण और उसकी अवश्यम्भावी बुराइयों के प्रवाह में धक्के खाते रहते हैं।

आध्यात्मिक मार्ग कण्टकाकीर्ण, ऊबड़-खाबड़ एवं असाध्य हैं जिसे दृढ़ सङ्कल्प, प्रबल आत्मिक शक्ति और आत्म-बल वाले पुरुषों ने ही पार किया है। एक बार इस मार्ग पर चलने का निश्चय कर लें तो प्रत्येक वस्तु सुगम एवं सरल हो जायेगी और आपको परमात्मा का अनुग्रह प्राप्त होगा । समस्त आध्यात्मिक संसार आपको प्रोत्साहित करेगा । यह मार्ग स्वयं आपको अनन्त सुख, परम शान्ति, शाश्वत जीवन और शाश्वत सूर्यप्रकाश के लोकों में ले जायेगा जहाँ आत्मा को कुरेदने वाले तीनों प्रकार के ताप, चिन्ता, परेशानी और भय प्रवेश करने का साहस नहीं करते, जहाँ जाति, वर्ण, रङ्ग आदि के सारे भेदभाव एक दिव्य प्रेम में विलीन हो जाते हैं और जहाँ इच्छाएँ तथा उत्कण्ठाएँ पूर्ण रूप से सन्तुष्ट हो जाती हैं ।

जिस प्रकार एक ही कोट जोन, दास अथवा पन्तलु को फिट नहीं बैठ सकता, उसी प्रकार एक ही मार्ग सब लोगों के लिए उपयुक्त नहीं हो सकता । चार प्रकार के स्वभाव वाले लोगों के लिए चार मार्ग होंगे परन्तु; वे सब एक ही लक्ष्य की ओर अग्रसर होते हैं और वह लक्ष्य है शाश्वत सत्य की प्राप्ति । सड़कें अलग-अलग हैं; किन्तु गन्तव्य-स्थान एक ही है । कर्मयोगी, भक्तियोगी, राजयोगी और ज्ञानयोगी के विभिन्न दृष्टिकोणों से शाश्वत सत्य की प्राप्ति हेतु जो चार मार्ग बताये गये हैं वे क्रमश: कर्मयोग, भक्तियोग, राजयोग और ज्ञानयोग कहलाते हैं ।

ये चार मार्ग एक-दूसरे के विरोधी नहीं हैं । इसके विपरीत वे एक-दूसरे के पूरक हैं । इनका तात्पर्य यह है कि हिन्दू-धर्म की विभिन्न पद्धतियों में परस्पर सामञ्जस्य है । धर्म के द्वारा मानव के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का—हृदय, बुद्धि और हाथ—विकास होना चाहिए । एकतरफा विकास अपेक्षित नहीं है । कर्मयोग मल को बहिष्कृत करके चित्त-शुद्धि करता है जिससे हाथ

विकसित होता है । भक्तियोग विक्षेप को दूर करके हृदय को विकसित करता है और राजयोग मन को स्थिर करके केन्द्रित करता है । ज्ञानयोग अविद्या के आवरण को हटा कर इच्छाशक्ति एवं विवेक को विकसित करता है तथा आत्मज्ञान की उत्पत्ति करता है । अतएव मनुष्य को चारों योगों का अभ्यास करना चाहिए । आध्यात्मिक मार्ग में शीघ्र प्रगति के लिए ज्ञानयोग को केन्द्र बनायें और अन्य योग उसके सहायक-रूप में हों ।

'योग' शब्द का अर्थ है जीवात्मा और परमात्मा (व्यक्तिगत आत्मा और परम आत्मा) का मिलन । जो विद्या इस गुह्य (*Occult*) ज्ञान की प्राप्ति का मार्ग बताती है, वह 'योगशास्त्र' कहलाती है । हठयोग का सम्बन्ध शरीर एवं श्वास-नियन्त्रण से है और राजयोग मन से सम्बन्धित है । राजयोग और हठयोग एक-दूसरे के लिए आवश्यक हैं । दोनों के ज्ञान के बिना कोई पूर्ण योगी नहीं बन सकता । जहाँ भली प्रकार से अभ्यास किये हुए हठयोग की समाप्ति होती है, वहाँ से राजयोग का आरम्भ होता है । हठयोग 'ह' और ठ' दो अक्षरों से बना हुआ संयुक्त शब्द माना जाता है । 'ह' का अर्थ है चन्द्रमा (इडा नाड़ी) और 'ठ' का अर्थ है सूर्य (पिङ्गला नाड़ी) । ये दोनों श्वास के अनुरूप हैं जो बायें-दायें नथनों के द्वारा प्रवाहित होती है । हठयोग सूर्य और चन्द्रमा—प्राण और अपान—को श्वास के नियमन द्वारा जोड़ने का उपाय बताता है ।

हठयोग स्वास्थ्य और दीर्घायु प्रदान करता है । इसके अभ्यास से हृदय, फेफड़ों, मस्तिष्क और पाचन-तन्त्र की क्रियाएँ नियमित होती हैं । रुधिर-परिसञ्चरण भी भली प्रकार होता रहता है । वृक्क (गुरदे), जिगर तथा अन्य आन्तरिक अङ्ग (*Viscera*) भली प्रकार कार्य करने लगते हैं । यह सब प्रकार के रोगों को दूर करता है ।

इस पुस्तक में योगशास्त्र द्वारा निर्धारित ८४ शारीरिक आसनों, महत्त्व-पूर्ण बन्धों, मुद्राओं और प्राणायाम-पद्धति का विवरण है । प्राणायाम का अभ्यास आसनों के साथ-साथ ही किया जाता है । योग के प्रथम दो सहायक अङ्ग यम और नियम हैं। आसन अष्टाङ्गयोग का तीसरा अङ्ग है और प्राणायाम चौथा अङ्ग । प्राचीन ऋषियों ने आध्यात्मिक संस्कृति की रक्षा करने एवं उच्च स्तरीय स्वास्थ्य, बल तथा स्फूर्त्ति को बनाये रखने हेतु सहायक रूप में इनका प्रतिपादन किया था।

साधारण शारीरिक व्यायामों से केवल बाह्य रूप से पुट्ठे आदि पुष्ट होते हैं। उनके अभ्यास से आकर्षक डील डौल वाला पहलवान बना जा सकता है। किन्तु आसनों के माध्यम से आन्तरिक अङ्गों जैसे जिगर, तिल्ली, अग्न्याशय (*Pancrea:*), अँतड़ियाँ, हृदय, फंफड़े, मस्तिष्क और महत्त्वपूर्ण शरीर की एंडोक्राइन ग्रन्थियों (गरदन के नीचे स्थित थायोराइड तथा पैराथा-योराइड; तिल्ली में ऐड्रेनल्स, मस्तिष्क में पिटुइटरी तथा पीनियल जो चयापचय (*M tabolism*) एवं कोषाणुओं तथा ऊतकों की संरचना, पोषण तथा विकास के लिए आवश्यक होती हैं) का सम्पूर्ण व्यायाम हो जाता है।

आसनों को किस प्रकार किया जाये, इससे सम्बन्धित निर्देश और उनके चित्र इस पुस्तक में दिये हुए हैं। इनकी सहायता से कोई भी साधक इनका अभ्यास कर सकता है।

भारतवर्ष को इस समय बलवान् और स्वस्थ मानव-समाज की आव-श्यकता है। कई कारणों से उसमें गिरावट आ गयी है। हमारे प्राचीन ऋषियों द्वारा बताये हुए इन अमूल्य व्यायामों का नियमित एवं विधिवत् अभ्यास करने से आप निस्सन्देह बलशाली और स्वस्थ पीढ़ी के पुनर्निर्माण में सहायक होंगे।

स्थिरसुखमासनम्—आसन वह है जो स्थिर और सुखदायक हो। इससे कोई कष्टदायक अनुभूति अथवा कष्ट नहीं होना चाहिए। यदि आसन स्थिर न हो तो मन शीघ्र विचलित होगा और चित्त की एकाग्रता नहीं हो पायेगी। शरीर चट्टान के समान स्थिर होना चाहिए, किञ्चित् भी शरीर का हिलना-डुलना न हो। आसन स्थिर होने से ध्यान में प्रगति होगी तथा शरीर की चेतना नहीं रहेगी।

प्राचीन काल में गुरुकुलों में इन आसनों का अभ्यास किया जाता था, इसलिए लोग बलशाली, स्वस्थ एवं दीर्घायु होते थे। स्कूल एवं कालेजों में आसनों का प्रचार होना चाहिए।

आसनों की सङ्ख्या उतनी ही है जितने इस सृष्टि में जीवों के प्रकार हैं (८४ लाख योनियाँ)। भगवान् शिव के द्वारा बताये हुए आसन सङ्ख्या में ८४ लाख हैं। उनमें से ८४ सर्वश्रेष्ठ हैं और इन ८४ में से मनुष्य के लिए ३२ अत्यन्त उपयोगी पाये गये हैं।

८४ लाख योनियों के बाद मनुष्य अपनी वर्त्तमान स्थिति में आया है। मानव-गर्भ में स्थित शिशुओं का भली प्रकार अध्ययन करने से भूतकाल के विभिन्न अवतरणों के चिह्न प्रकट होंगे।

कुछ आसन खड़े हो कर किये जाते हैं यथा—ताड़ासन, त्रिकोणासन, गरुड़ासन आदि। जिनका अभ्यास बैठ कर किया जाता है वे हैं—पश्चिमोत्तानासन, जानुशिरासन, पद्मासन, लोलासन आदि। कुछ आसनों का लेट कर अभ्यास किया जाता है जैसे उत्तानपादासन, पवनमुक्तासन। दुर्बल एवं कोमल शरीर के व्यक्ति लेट कर ही आसनों का अभ्यास कर सकते हैं।

शीर्षासन, वृक्षासन, सर्वाङ्गासन, विपरीतकरणी-मुद्रा आदि नीचे शिर और ऊपर टाँगें करके किये जाते हैं।

सामान्यतः इन आसनों का अभ्यास १०-१२ वर्ष की आयु के बाद से किया जा सकता है। २०-३० वर्ष की आयु वाले लोग अच्छी तरह इनका अभ्यास कर लेते हैं। एक दो महीने के अभ्यास से समस्त सख्त नाड़ियाँ नसें और हड्डियाँ मुलायम (*Elastic*) हो जाती हैं। वृद्धजन तक सभी प्रकार के आसन कर सकते हैं। हाँ, यदि वे शारीरिक रूप से स्वस्थ न हों तो शीर्षासन करना उनके लिए आवश्यक नहीं है। कुछ लोग बड़ी उम्र में भी शीर्षासन करते हैं।

वेदान्ती इस कारण आसन-प्राणायाम करने से डरता है कि इससे देहाध्यास बढ़ेगा और वैराग्य-साधना में बाधा पड़ेगी। यद्यपि दो मार्ग हठयोग और वेदान्त बिलकुल भिन्न हैं, फिर भी वेदान्ती अपने लाभ के लिए प्राणायाम और आसनों तथा अपनी साधना में सामञ्जस्य स्थापित कर सकता है। मैंने कई वेदान्तियों को रोगियों जैसी स्थिति में, अत्यन्त दुर्बल और गिरे हुए स्वास्थ्य में देखा है—वे कोई भी कठोर वेदान्तिक साधना नहीं कर पाते, वे यान्त्रिक रूप में ओठों से ॐ, ॐ का उच्चारण मात्र कर सकते हैं। उनमें इतनी शक्ति नहीं है कि शुद्ध सात्त्विक अन्तःकरण से अपनी आन्तरिक ब्रह्माकार-वृत्ति को उच्चतर बना सकें। शरीर मन से अत्यधिक सम्बन्धित है – दुर्बल रोगी शरीर का अर्थ दुर्बल मन भी होता है। यदि वेदान्ती अपने शरीर और मन को सबल एवं स्वस्थ रखने के लिए थोड़ा प्राणायाम और आसनों का अभ्यास करे तो वह भली प्रकार निदिध्यासन करके श्रेष्ठ आध्यात्मिक साधना सम्पन्न कर सकता है। यद्यपि शरीर जड़ और निःसार है, फिर भी आत्मसाक्षात्कार के लिए यह एक महत्त्वपूर्ण साधन है। अपने लक्ष्य पर पहुँचने के लिए यह शरीर एक घोड़ा है।

यदि घोड़ा ठोकर खा कर गिर पड़ेगा तो आप अपने गन्तव्य स्थान पर नहीं पहुँच सकते। यदि यह साधन निर्बल हो जाता है तो आप अपने लक्ष्य आत्मसाक्षात्कार को प्राप्त नहीं कर सकेंगे।

षट् कर्मों के नियमित अभ्यास से शुद्धि प्राप्त की जाती है। वे षट्-कर्म हैं—धौति, वस्ति, नेति, नौलि, त्राटक और कपालभाति।

आसनों से शक्ति प्राप्त होती है, तथा मुद्रा से स्थिरता। प्रत्याहार धैर्य तथा शान्ति प्रदान करता है और प्राणायाम से देह में हलकापन आता है। ध्यान द्वारा आत्मा का साक्षात्कार होता है। समाधि निर्लिप्तता अर्थात् कैवल्य प्रदान करती है जो निश्चय ही मुक्ति अथवा परमानन्द है।

इतिहास के प्रारम्भ से कई असाधारण बातें मानव-जगत् में घटित होती मानी गयी हैं। पाश्चात्य देशों में 'अन्तरिक्षीय बोध' (*Cosmic Consciousness*) के नाम से कई धार्मिक व्यक्तियों के अनुभव अङ्कित हुए। कुशल तान्त्रिकों ने सूक्ष्म शरीर को स्थूल शरीर से अलग करने का चमत्कार प्रदर्शित किया। कुछ सतही वैज्ञानिक जो विभिन्न योग-क्रियाओं को समझने में असमर्थ हैं इनकी उपेक्षा करने का प्रयत्न करते हैं। कई समझदार वैज्ञानिक इस प्रकार के अलौकिक कृत्यों का अध्ययन करने, खोज करने और उन्हें सर्वसाधारण के समझने योग्य बनाने हेतु प्रयत्नशील हैं। मनुष्य अपनी अन्तर और बाह्य प्रकृति पर नियन्त्रण स्थापित करके दिव्यता को प्राप्त हो सकता है।

वाराणसी के स्वर्गीय तैलङ्ग स्वामी, आलन्दी के ज्ञानदेव, राजा भर्तृहरि और चङ्गदेव—इन सभी ने योगासनों द्वारा अपने-आपको देवत्व के स्तर तक उठा लिया था। जो-कुछ किसी एक ने प्राप्त किया है लगन के साथ प्रयत्न करने से हम सभी उसे प्राप्त कर सकते हैं। यह एक माँग और पूर्त्ति का

प्रश्न है। प्रबल माँग होने पर पूर्त्ति तुरन्त की जायेगी। प्रश्न यह है कि 'क्या आप ईश्वर को चाहते हैं? क्या आप आध्यात्मिक रूप से भूखें और प्यासे हैं ?'

ईश्वर करे प्रसन्नता, आनन्द, अमरता, शान्ति, सन्तुलन, यश तथा महिमा सदैव आप सबमें वास करें!

दिव्य दृष्टि

आधुनिक जीवन की अन्तहीन और सतत बढ़ती हुई ऐन्द्रिक उत्तेजनाओं में खोया हुआ मानव अपनी इन्द्रियों का दुरुपयोग कर रहा है, और फिर इस बात को ले कर दुःखी होता है कि वृद्धावस्था के आने से पूर्व ही वे कार्य-कुशलता खोने लगी हैं।

अपनी थकी हुई जिह्वा को सन्तुष्ट करने के लिए मनुष्य अपने भोजन में अधिकाधिक गरम, मधुर, नमकीन अथवा खट्टे पदार्थों की भरमार करता है। शाक, फल और खाद्यपदार्थों के मूल मधुर स्वाद बहुत पहले से ही भुला दिये गये हैं। शायद उसकी जीभ को वे मधुर स्वाद नसीब नहीं होंगे।

किन्तु सर्वाधिक दुरुपयोग मनुष्य की दृष्टि का होता है। जब से मनुष्य ने चमचमाते सफेद कागज पर काले अक्षरों की छपाई का आविष्कार किया और कृत्रिम प्रकाश में उसे पढ़ने लगा, अपने खुले नेत्रों से श्रम कराने की अवधि बढ़ते-बढ़ते आधा दिन हो गयी और प्रतियोगिता-परीक्षाओं के बेहद दबाव से दिन के दो तिहाई भाग की सीमा तक पहुँच गयी। अपनी सामान्य दृष्टि का आनन्द मानव को अपने जीवन की अवधि के छोटे से काल-खण्ड में ही मिल पाता है और प्रायः स्कूल छोड़ने से भी काफी पहले वह चश्मा लगा कर 'चार आँखों वाला' हो जाता है। अँधेरा होने पर टार्च या सड़क के प्रकाश का सहारा लिये बिना अपनी आँख, कान और नाक पर ही निर्भर रह कर घूमने का आनन्द लेना आजके उस सभ्य मानव के लिए अविश्वसनीय है जो गत चालीस-पचास वर्षों से अपने नींद से पूर्व का समय सिनेमा या टेलीविज़न की झिलमिलाती तस्वीरों को घूरने में ही व्यतीत करता आ रहा है।

मनुष्य अपनी इन्द्रियों को पुनः शक्ति प्रदान नहीं कर सकता ; किन्तु यदि एक बार उसे विश्वास हो जाय कि उनका दुरुपयोग करने से वे कितनी दुर्बल एवं व्यर्थ होने लगी हैं तो अप्राकृत रहन-सहन की आदतें कम करके तथा सम्बन्धित सुस्त माँसपेशियों का व्यायाम करके वह उन (इन्द्रियों) की शक्ति, लचीलापन और उपयोगिता को कुछ अंशों तक पुनः प्राप्त कर सकता है।

अधिकतर नेत्रों की थकान देर तक एक दृश्य पर दृष्टि लगाने के कारण होती है । कमरे में इधर-उधर नजर डालने अथवा चलते हुए कुछ फीट की दूरी पर देखते रहने से यह थकान थोड़ी कम हो जाती है । आँखों को थकाने वाली आदत से बचना चाहिए । कमरे से बाहर निकल कर दूर तक दृष्टि फेंक कर आँखों की थकान कम होती है । क्षितिज की ओर प्रतिदिन देखिए । जितना ही आप उसे स्पष्टता से देखेंगे, उतनी ही आँखों की माँस-पेशियों को नव-शक्ति प्राप्त होगी । इसी उद्देश्य से बादलों की ओर भी देखें ; परन्तु सूर्य की ओर सीधे नहीं ।

त्राटक द्वारा सूर्य पर दृष्टि लगाने के गलत अभ्यास के कारण इस क्रिया के बारे में भ्रान्तियाँ फैल गयी हैं । यदि अरक्षित आँख पर सूर्य की किरणें पड़ने दी जायें (विशेषकर उस समय जब सूर्य आकाश में पूर्ण ऊँचाई पर हो) तो उससे भारी हानि होती है । फलस्वरूप स्थायी रूप से अन्धापन हो सकता है । जिस समय सूर्य सपाट (पहाड़ियों से आच्छादित नहीं) क्षितिज से थोड़ा ही उठा हो—ऊँची पहाड़ियों से उठने के घण्टों पश्चात् नहीं—उस समय थोड़ा-सा त्राटक करने से चित्त की एकाग्रता बढ़ती है तथा आँखों की सफाई हो जाती है; किन्तु इस क्रिया को पूर्ण सावधानी से करना चाहिए ।

निम्नाङ्कित सरल व्यायामों से इस सीमा तक नेत्र-ज्योति बढ़ सकी है कि कुछ लोग फिर से चश्मे की सहायता के बिना अखबार आदि पढ़ने लगे,

परन्तु यदि नेत्र अधिक कमजोर हैं तो इन व्यायामों का लाभ अपेक्षाकृत अधिक समय के बाद या आंशिक रूप से मिल सकता है ।

व्यायाम सङ्ख्या १ : दूर के पदार्थं पर दृष्टि जमायें । सामान्य दृष्टि वाले व्यक्ति आकाश (*Horizon*) पर दृष्टि जमा सकते हैं ; किन्तु दुर्बल दृष्टि वाले सुदूर पदार्थं को (जिसे वे स्पष्ट रूप से देख सकते हैं) देखें और दिन-प्रति-दिन पदार्थ और अपने बीच की दूरी बढ़ाते जायें । फिर आँखों को बिना हिलाये अपने सामने की ओर एक बाँह फैला कर दूरस्थ पदार्थं को ढकने के लिए तर्जनी उँगली उठायें । तब मूल पदार्थं के अतिरिक्त दो उँगलियाँ दिखायी देंगी ; क्योंकि उँगलियाँ दृष्टि-केन्द्र से बाहर होगी । उँगली पर दृष्टि स्थिर करें, इसके बाद दूरस्थ पदार्थं पर पाँच-छः बार इस अभ्यास को दोहरायें ।

उँगली के शिरे पर दृष्टि जमाये हुए आँखों की ओर उँगली को धीरे-धीरे सरकायें, जब तक कि वह भौहों के मध्य माथे पर टिक न जाय । आँखें बन्द कर लें । उँगली और आँखों को तब तक इसी प्रकार रखें जब तक थोड़ा तनाव अनुभव न होने लगे । तत्पश्चात् धीरे-धीरे बाँह सीधी करें तथा उँगली दूरस्थ पदार्थं के सामने अपने स्थान पर वापस ले आयें । बाँह को सीधी करते समय बारी-बारी से दूरस्थ पदार्थं पर और फिर उँगली के सिरे पर दृष्टि जमायें । इसे कई बार दोहरायें । जब उँगली अपने पूर्व-स्थान पर आजाये तब उस पर दोबारा दृष्टि जमायें ।

व्यायाम सङ्ख्या २ : उपर्युक्त व्यायाम को दोहरायें ; परन्तु दृष्टि को उँगली के सिरे पर स्थिर किये हुए उँगली को नासिकाग्र तक ले आयें ।

इन नेत्र-व्यायामों को करते समय पलकें न झपकाने की चेष्टा कर— नेत्र बराबर खुले रहें । यह एक प्रकार का त्राटक है जिससे चित्त की एकाग्रता विकसित होगी तथा मन केन्द्रित होगा ।

व्यायाम सङ्ख्या ३ : शिर को हिलाये विना पुतलियों को पहले बायीं ओर, फिर दायीं ओर तथा इसके बाद ऊपर आकाश की तरफ और तब नीचे धरती की ओर घुमायें । फिर गुणा के चिह्न के अनुरूप सर्वोच्च बायें बिन्दु से आरम्भ करके धीरे-धीरे दाहिनी ओर सबसे नीचे के बिन्दु तक और इसके बाद बायीं ओर नीचे के बिन्दु से प्रारम्भ करते हुए ऊपर दाहिनी ओर के सर्वोच्च बिन्दु तक दृष्टि ले जायें ।

व्यायाम सङ्ख्या ४ : इस व्यायाम से चित्त को एकाग्र करने में सहायता मिलेगी ; क्योंकि आपको श्वास और नेत्रों (दृष्टि) की क्रिया—दोनों बातों पर एक साथ ध्यान रखना होगा । नीचे भूमि पर देखें, फिर धीरे-धीरे दृष्टि घुमाते हुए और धीरे-धीरे गहरी साँस लेते हुए एक बड़ा चक्र बनायें — पहले बायीं ओर, ऊपर, दाहिनी और नीचे की ओर । जब चक्र बनाना समाप्त हो जाये उस समय तक आपको पूरी शक्तिभर अन्दर की ओर साँस ले चुकना चाहिए । इस चक्र को दोहरायें—इस बार धीरे-धीरे श्वास इस प्रकार छोड़ें कि चक्र समाप्त होते-होते फेफड़े पूर्ण रूप से खाली हो जायें । श्वास को लेते और छोड़ते हुए घड़ी की सूई की दिशा में दो चक्र पूरे करें । ये चक्र अधिक-से-अधिक बड़े होने चाहिए ।

व्यायाम सङ्ख्या ५-६ : अनन्त आकार हैं जिन्हें दृष्टि घुमाते हुए बनाया जा सकता है— वर्णमाला के अक्षर, वर्ग, रत्न (*Diamond*), आठ की गिनती (8) । इन आकारों को सीधा और तत्पश्चात् पार्श्व में लेटा हुआ दोनों ही तरह से नेत्रों से खींचा जा सकता है ।

इन व्यायामों को पूरी लगन से खुली हवा में करें—किन्तु सीधे सूर्य के सामने नहीं । अभ्यास समाप्त करने के बाद नेत्रों को हथेली से ढक लें । हाथों के अँधेरे में नेत्रों को खोलें और गहरी साँस लें । खुले नेत्रों पर चित्त को एकाग्र करें (विशेषकर तब जब आप साँस छोड़ रहे हों) । इस प्रकार प्रचुर प्राण-शक्ति एवं शुद्ध रुधिर नेत्रों को उपलब्ध होगा । हथेलियों को हटाने से पहले नेत्रों को पुनः बन्द कर लें ताकि आपकी दृष्टि आकस्मिक चौंधाने वाले प्रकाश से बची रहे । फिर अन्त में तीन बार साँस लें ।

सदैव पर्याप्त स्थिर प्रकाश में पढ़ाई करें । प्रकाश को बायीं ओर से आना चाहिए – न वह अधिक प्रखर हो और न अधिक धीमा । अपनी नेत्र-ज्योति को निम्नस्तरीय चलचित्रों को देखने में नष्ट मत करें । दिन के स्वाभाविक प्रकाश में नेत्रों से कार्य लेने की चेष्टा करें । सोना, वार्त्तालाप, ध्यान एवं अन्य आध्यात्मिक अभ्यास आप रात्रि में कर सकते हैं । यथासम्भव प्राकृतिक वातावरण में रहें—नेत्रों को प्रकृति की हरियाली और नीलिमा के सम्पर्क में आने दें । वृक्ष और पहाड़ों की हरियाली नेत्रों के लिए सर्वश्रेष्ठ पोषक-तत्त्व है ।

ईश्वर करे सरल, स्वस्थ एवं प्रेरणादायक जीवन-यापन और सभी कुछ सुन्दर तथा पूर्ण देखने की दृष्टि द्वारा आप शीघ्र भगवत्साक्षात्कार करें !

—स्वामी करुणानन्द

विषय-सूची

प्रथम अध्याय-ध्यान के लिए आसन

द्वितीय अध्याय-मुख्य आसन

तृतीय अध्याय-विविध आसन

चतुर्थ अध्याय-महत्त्वपूर्ण मुद्राएँ और बन्ध

तृतीय अध्याय-विविध आसन

चतुर्थ अध्याय-महत्त्वपूर्ण मुद्राएँ और बन्ध

पञ्चम अध्याय-प्राणायाम-विज्ञान

योग-परिशिष्ट

योगासन

ॐ

प्रथम अध्याय

ध्यान के लिए आसन

सामान्य निर्देशन

जप और ध्यान के लिए चार आसन निर्धारित हैं। ये हैं; पद्मासन, सिद्धासन, स्वस्तिकासन और सुखासन। इन चारों में से किसी भी एक आसन में बिना शरीर को हिलाये तीन घण्टे तक बैठने में समर्थ होना चाहिए। तभी आप आसन-जय प्राप्त कर सकेंगे। तत्पश्चात् आप प्राणायाम और ध्यान का अभ्यास आरम्भ कर सकेंगे। स्थिर आसन प्राप्त किये बिना ध्यान-योग में आप भली प्रकार आगे नहीं बढ़ सकते। आपको आसन में जितनी अधिक स्थिरता प्राप्त होगी, उतना ही अधिक आप मन को एकाग्र तथा स्थिर कर सकेंगे। यदि आप एक घण्टा भी आसन-मुद्रा को स्थिर कर लें, तो आप चित्त की एकाग्रता को और उसके फलस्वरूप अनन्त शान्ति तथा आत्मिक आनन्द को प्राप्त कर सकेंगे।

ध्यान-मुद्रा में बैठते समय यह विचार करें कि 'मैं चट्टान के समान दृढ़ हूँ, कोई शक्ति मुझे नहीं हिला सकती।' यदि मन को अनेक बार यह निर्देश देते रहें, तो आसन शीघ्र स्थिर हो जायेगा। ध्यान के लिए बैठते समय आप-को जीवित मूर्त्ति के समान हो जाना चाहिए। तभी आपके आसन में यथार्थतः स्थिरता आयेगी। वर्ष भर के नियमित अभ्यास से आपको सफलता मिलेगी और फिर एक आसन में तीन घण्टे तक आप बैठ सकेंगे। आधे घण्टे से आरम्भ करें और धीरे-धीरे अभ्यास बढ़ाते जायें।

यदि कुछ समय बाद टाँगों में बेहद पीड़ा होने लगे तो तुरन्त टाँगों को खोल कर पाँच मिनट के लिए हाथों से मालिश कर लें, फिर आसन में

बैठ जायें। फिर आप दर्द के बदले अत्यधिक आनन्द का अनुभव करेंगे। प्रातः एवं सायं दोनों समय आसन का अभ्यास करें।

आसन में बैठ कर नेत्र बन्द कर लें, भृकुटी अथवा त्रिकुटी (अर्थात् दोनों भौहों के मध्य भाग) या नाभि-मण्डल पर, जिसे अनाहत-चक्र कहते हैं, दृष्टि को केन्द्रित करें। त्रिकूट (आज्ञा-चक्र) का स्थान है। इस स्थान पर कोमलता से अर्थात् बिना बल लगाये ध्यान लगाने से सरलतापूर्वक मन को वश में किया जा सकता है। आपको तुरन्त एकाग्रता प्राप्त होगी। नासिका के अग्र भाग पर चित्त लगाने से भी वही लाभ होगा; किन्तु इसमें मन को जमाने में अधिक समय लगेगा। जो लोग भृकुटी अथवा नासाग्र-भाग पर दृष्टि नहीं जमा सकते वे किसी बाह्य बिन्दु अथवा आन्तरिक हृदय-चक्र, शिर, ग्रीवा आदि पर जमा सकते हैं। त्रिकूट (आज्ञा-चक्र) पर दृष्टि जमाने को भ्रूमध्य-दृष्टि भी कहा जाता है।

शिर, गरदन और शरीर के ऊपरी भाग मेरुदण्ड को एक सीधी समरेखा में रखें। पद्म, सिद्ध, स्वस्तिक अथवा सुख में से किसी भी एक आसन पर स्थिर रहें, और बारम्बार अभ्यास के द्वारा उसे बिलकुल दृढ़ एवं पूर्ण बना लें। आसन कभी मत बदलें। एक ही आसन पर नित्य-निरन्तर जमे रहें। उसमें जोंक की भाँति चिपक जायें। ध्यान के लिए एक आसन के महत्त्व को भली प्रकार से समझ लें।

१--पद्मासन

पद्म का अर्थ है कमल। आसन के प्रदर्शन करने पर एक प्रकार से कमल जैसा प्रतीत होता है, इसीलिए इसका नाम पद्मासन रखा गया है। इसे कमलासन भी कहते हैं।

जप और ध्यान के लिए वर्णित चार आसनों में से पद्मासन सर्वोपरि है। यह ध्यान का अभ्यास करने के लिए सर्वश्रेष्ठ आसन है। घेरण्ड और शाण्डिल्य

आदि ऋषियों ने इस महत्त्वपूर्ण आसन की अत्यधिक प्रशंसा की है । यह गृहस्थियों के लिए अत्यधिक अनुकूल है। इस आसन में स्त्रियाँ भी बैठ सकती हैं । पद्मासन दुर्बल तथा युवा मनुष्यों के लिए भी उपयुक्त है ।

विधि

टाँगों को आगे फैला कर भूमि पर बैठें । फिर दायाँ पैर बायीं जङ्घा पर, बायाँ पैर दायीं जङ्घा पर रखें। अब हाथों को घुटनों के जोड़ों पर रखें ।

अब दोनों हाथों की अँगुलियों का ताला बना कर बँधे हाथों को बायें टखने पर रखें । या आप फिर अपना दायाँ हाथ दायें घुटने पर और बायाँ हाथ बायें घुटने पर रख सकते हैं । इसमें हथेलियाँ ऊपर की ओर होनी चाहिएं और तर्जनी अँगूठे के मध्यभाग को छूती हुई होनी चाहिए । इसे चिन्मुद्रा कहते हैं ।

पद्मासन के प्रकार

(१) अर्द्ध पद्मासन—यदि आप आरम्भ में अपने दोनों पैर जङ्घाओं पर न रख सकें, तो कुछ देर तक कभी एक पैर एक जङ्घा पर तथा कुछ देर दूसरा पैर दूसरी जङ्घा पर रखें। कुछ दिन अभ्यास करने से आप अपने दोनों पैर जङ्घाओं पर रख सकेंगे । इसे अर्द्ध पद्मासन कहते हैं ।

(२) वीरासन—आराम से बैठ कर, दायाँ पैर बायीं जङ्घा पर तथ बायाँ पैर दायीं जङ्घा के नीचे रखें । गौराङ्ग महाप्रभु इसी आसन में ध्यान के लिए बैठते थे । यह आरामदायक मुद्रा है । वीरासन का अर्थ है वीर-मुद्रा ।

(३) पर्वतासन—साधारण पद्मासन लगा कर घुटनों के बल खड़े हो जायें और अपने हाथों को ऊपर उठायें । यह पर्वतासन है । पृथ्वी पर एक मोटा कम्बल बिछा कर यह आसन करें ताकि घुटनों पर चोट न लगे । प्रारम्भ में, जब तक आप सन्तुलन प्राप्त न कर लें, कुछ दिनों के लिए आप

स्टूल या बेच का सहारा ले सकते हैं। बाद में आप हाथों को ऊँचा उठा सकते हैं।

वीरासन में बैठ कर हाथ ऊँचे उठायें और स्थिर हो जायें। कुछ लोग इसे भी पर्वतासन कहते हैं।

(४) **समासन**– बायीं एड़ी को दायीं जङ्घा के सिरे पर रखें और दायीं एड़ी को बायीं जङ्घा के सिरे पर। आराम से बैठें, दायें या बायें किसी भी ओर मत झुकें। यह समासन कहलाता है।

(५) **कार्मुकासन**—साधारण पद्मासन लगायें। दायें हाथ से बायें पैर का पञ्जा और बायें हाथ से दायें पैर का पञ्जा पकड़ें। इस प्रकार अपने हाथों की कोहनी पर से कैंची बना लें।

(६) **उत्थित पद्मासन**—पद्मासन में बैठ कर अपनी दोनों हथेलियों को अपने दोनों ओर भूमि पर टेक लें। धीरे-धीरे शरीर को उठायें, झटका नहीं लगने पावे, न शरीर काँपे। इस उठी हुई स्थिति में जितनी देर ठहरें, श्वास को रोके रखें। नीचे आने पर आप श्वास को बाहर निकाल सकते हैं। जो लोग कुक्कुटासन नहीं कर सकते, वे यह आसन कर सकते हैं। इस आसन में हाथ पार्श्व (Side) में रखे जाते हैं जबकि कुक्कुटासन में हाथ जङ्घा और पिण्डलियों के बीच में रखे जाते हैं। इन दोनों में इतना ही अन्तर है।

(७) **बद्धपद्मासन**–कुछ लोग इसे पद्मासन-मुद्रा भी कहते हैं।

(८) ऊर्ध्वपद्मासन, (९) लोलासन, (१०) कुक्कुटासन, और (११) तोलाङ्गुलासन, ७ से ११ तक वर्णित इन आसनों का उदाहरण-सहित अन्यत्र पृथक् से वर्णन किया जायेगा।

२–सिद्धासन

पद्मासन के बाद महत्त्व की दृष्टि से सिद्धासन आता है। कुछ लोग इस आसन को ध्यान के लिए पद्मासन से भी अधिक उपयोगी मानते हैं। यदि

आप इस आसन को सिद्ध कर लें तो आपको अनेक सिद्धियाँ उपलब्ध हो जायेंगी। कई प्राचीन सिद्ध-योगियों द्वारा इस आसन का अभ्यास किया गया, इसी कारण इसका नाम सिद्धासन पड़ा।

भारी जङ्घाओं वाले स्थूल जन भी इस आसन को सरलतापूर्वक लगा सकते हैं। वस्तुतः, यह आसन कुछ लोगों को पद्मासन की अपेक्षा अधिक उपयोगी लगता है। युवक ब्रह्मचारी, जो ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करना चाहते हैं, उन्हें इस आसन का अभ्यास अवश्य करना चाहिए। महिलाओं के लिए यह आसन उपयुक्त नहीं है।

विधि

वायें या दायें पैर की एड़ी को गुदा से थोड़ा ऊपर सीवनी के मध्य में, जो कि पाचन-नली का मुक्त स्थान है, रखें। दूसरी एड़ी को जन-नेन्द्रिय की जड़ पर रखें। पैर और टाँगों को इतने अच्छे ढङ्ग से जमायें कि टखनों के जोड़ एक-दूसरे को छूते रहें। हाथों को उसी प्रकार रखें जिस प्रकार उन्हें हम पद्मासन में रखते हैं।

सिद्धासन के विभिन्न प्रकार

(१) **गुप्तासन**—बायीं एड़ी को जननेन्द्रिय के ऊपर रखें। इसी प्रकार दायीं एड़ी को भी जननेन्द्रिय के बाहरी अङ्ग पर रखें। दोनों टखने आमने-सामने या एक-दूसरे से सटे रहें। दाहिने पैर की अँगुलियों को बायीं जङ्घा और बायीं पिण्डलियों के बीच खाली भाग में डाल दें और बायें पैर की अँगुलियों को दायीं टाँग से ढक दें। गुप्त का अर्थ है छिपा हुआ। इस आसन से जन-नेन्द्रिय को भलीभाँति ढका जाता है, इसलिए इसे गुप्तासन कहा जाता है।

(२) **वज्रासन**—बायीं एड़ी को जननेन्द्रिय के नीचे और दायीं एड़ी को इसके ऊपर रखें। वज्र का अर्थ है, वह ठोस पदार्थ जो न टूट सके, न हिल सके। वज्रासन का एक और प्रकार भी है। उदाहरणों-सहित इस सम्बन्ध में अलग से अन्यत्र निर्देश दिये गये हैं।

(३) **बद्धयोन्यासन**–साधारण सिद्धासन में बैठ जायें और योनि-मुद्रा करें। इसको बद्धयोन्यासन कहते हैं। योनि-मुद्रा का वर्णन अन्य मुद्राओं के साथ किया गया है।

(४) **क्षेमासन**–सिद्धासन में बैठ कर यदि आप अपने दोनों हाथों को सीने की सीध में ऊपर को उठाते हैं तो इसे क्षेमासन कहा जाता है। इसका अर्थ यह होता है कि आप मानव-कल्याण के लिए प्रार्थना कर रहे हैं। इसमें हथेलियाँ आपस में आमने-सामने एक-दूसरे को देखती हुई होनी चाहिए।

(५) **स्थिरासन**–कुछ लोग साधारण सिद्धासन को ही स्थिरासन कहते हैं।

(६) **मुक्तासन**–साधारण सिद्धासन को मुक्तासन भी कहते हैं।

३–स्वस्तिकासन

स्वस्तिकासन का आशय है, शरीर को सीधा रख कर आराम से बैठना। टाँगों को आगे फैला कर बैठें, फिर बायीं टाँग को मोड़ कर इस पैर को दायीं जङ्घा की पेशियों के पास रखें। इसी प्रकार दायीं टाँग को मोड़ कर उसे बायीं जङ्घा तथा पिण्डलियों की माँसपेशियों के मध्य वाले खाली स्थान पर कर दें। अब आपके दोनों पैर जङ्घाओं तथा टाँगों की पिण्डलियों के बीच में हो जायेंगे। ध्यान के लिए यह आसन अति-सुखद है। हाथों को पद्मासन की भाँति रखें।

४–सुखासन

जप और ध्यान के लिए किसी भी आनन्ददायक आसन को सुखासन कहते हैं। इसमें महत्त्वपूर्ण बात यह है कि शिर, गरदन और धड़ सीधे सम-रेखा में बिना मुड़े रहने चाहिए। जो लोग ३०-४० वर्ष की उम्र के बाद जप तथा ध्यान आरम्भ करते हैं, वे सामान्यतया अधिक समय तक पद्म,

सिद्ध अथवा स्वस्तिकासन में नहीं बैठ पाते हैं। अब मैं आपको सुखासन का एक ऐसा सुन्दर तथा सरल रूप बताता हूँ जिसमें वृद्ध लोग भी देर तक बैठ कर ध्यान लगा सकते हैं। यह सुखासन विशेषकर उन वृद्ध लोगों के लिए ही उपयुक्त है, जो निरन्तर प्रयत्न करने पर भी देर तक पद्म या सिद्ध आसन में बैठने में असमर्थ हैं। युवक लोग भी इस आसन का अभ्यास कर सकते हैं।

विधि

पाँच हाथ लम्बा वस्त्र ले कर उसे इस प्रकार मोड़ें कि उसकी चौड़ाई आधा हाथ मात्र रह जाये। दोनों पैरों को अपनी जङ्घाओं के बीच रखते हुए अपने साधारण तरीके से बैठ जायें। दोनों घुटनों को अपने सीने से ऊपर की ऊँचाई पर उस समय तक उठाते रहें जब तक कि दोनों घुटनों के बीच में ८-१० इञ्च का अन्तर रहता है। अब मोड़े हुए कपड़े को ले कर उसका एक छोर बायें घुटने के पास रखें। फिर बायीं ओर से पीछे को घुमा कर दायें घुटने की ओर से लाते हुए आरम्भ के बिन्दु पर ला कर दोनों सिरों को गाँठ बाँध दें। अपनी दोनों हथेलियों को परस्पर आमने-सामने रखते हुए उन्हें घुटनों के बीच में वस्त्र के सहारे रखें। इस आसन में हाथ, पैर और रीढ़ की हड्डी को सहारा मिलता है, इसलिए आपको कभी थकान अनुभव नहीं होगी। यदि आप कोई अन्य आसन नहीं कर सकते तो कम-से-कम इस आसन में आरामपूर्वक बैठ कर देर तक जप-ध्यान करिए।

सुखासन के प्रकार

(१) पवनमुक्तासन–बैठ कर दोनों एड़ी मिलायें एवं दोनों घुटनों को छाती तक उठायें। अब आप दोनों हाथों से घुटने बाँध दें।

(२) वाम पवनमुक्तासन–इसमें केवल बायें घुटने को ही भूमि से ऊपर उठाया जाता है और उसे पवनमुक्तासन की भाँति दोनों हाथों से बाँधा जाता है।

(३) दक्षिण पवनमुक्तासन—इस आसन में दायें घुटने को उठाया जाता है और उसे हाथों से बाँधा जाता है तथा बायीं टाँग को भूमि पर रखा जाता है।

उपर्युक्त तीनों आसन भूमि पर लेटे हुए किये जा सकते हैं।

(४) भैरवासन—वाम पवनमुक्तासन में बैठें और दोनों घुटनों को बाँधने के बजाय दोनों हाथों को केवल जङ्घाओं के पार्श्व में पैरों के समीप रख लें।

पद्म, सिद्ध और स्वस्तिक आसनों के लाभ

हठयोग-सम्बन्धी ग्रन्थों में पद्म और सिद्धासन के लाभों का अत्यधिक वर्णन किया गया है। जो व्यक्ति इनमें से किसी भी आसन में नित्य प्रति १५ मिनट तक भी नेत्र मूँद कर हृदय-कमल में परमात्मा का ध्यान करता है उसके समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं और वह शीघ्र ही मोक्ष को प्राप्त करता है, इन आसनों से पाचन-शक्ति बढ़ कर भूख लगती है, स्वास्थ्य एवं सुख में वृद्धि होती है। इनसे गठिया रोग दूर होता है एवं वात, पित्त, कफ आदि त्रिदोष सन्तुलित रहते हैं। इनसे टाँगों और जङ्घाओं की नाड़ियाँ स्वच्छ तथा शक्तिशाली होती हैं। ये ब्रह्मचर्य-पालन के लिए अति-उपयुक्त हैं।

द्वि ती य अ ध्या य

मुख्य आसन

५-शीर्षासन

शीर्षासन के अन्य नाम भी हैं जैसे कपालासन, वृक्षासन और विपरीत-करणी, यह आसन सब आसनों का राजा है।

विधि

एक कम्बल को चार तह करके बिछा लें। दोनों घुटनों के बल बैठें और अँगुलियों को एक-दूसरे में डाल कर ताला-सा बनायें और उसे कोहनी तक भूमि पर रखें। अब शिर के ऊपरी भाग को इन अँगुलियों के ताले पर अथवा दोनों हाथों के बीच में रखें। धीरे-धीरे टाँगों को उठायें जब तक कि वे सीधी स्थिति में न हो जायें। प्रारम्भ में पाँच सेकण्ड तक इस स्थिति में खड़े रहें। धीरे-धीरे प्रति सप्ताह १५ सेकण्ड बढ़ाते रहें और उस समय तक बढ़ाते रहें जब तक कि आप २० मिनट या आधा घण्टे तक इसे न लगा सकें। फिर धीरे-धीरे टाँगें नीचे ले आयें। शक्तिशाली लोग दो-तीन महीने में ही इस आसन को आधा घण्टे तक करने लगते हैं। इसे धीरे-धीरे करें। मन में बैचेनी मत रखें। चित्त को शान्त रखें, आपके सामने शाश्वतता है। इस अवस्था में शीर्षासन के अभ्यास में शिथिलता मत करें। यह आसन खाली पेट करना चाहिए। यदि आपके पास समय हो, तो इसे प्रातः-सायं दोनों समय करें। इस आसन को बहुत धीरे-धीरे करें और झटका मत लगने दें। शिर के बल खड़े होने पर नासिका द्वारा धीरे-धीरे श्वास लेना चाहिए, मुँह द्वारा कभी श्वास नहीं लेना चाहिए।

हथेलियों को शिर के दोनों ओर भूमि पर भी रख कर यह आसन किया जा सकता है। यदि आपका शरीर स्थूल है, तो इस प्रकार से आसन लगाना आपके लिए सरल रहेगा। सन्तुलन सीखते समय अँगुलियों की ताले वाली पद्धति अपनानी चाहिए। जो लोग पैरेलल बार्स पर या भूमि पर सन्तुलन रख सकते हैं, उन लोगों के लिए यह आसन कठिन नहीं है। अभ्यास करते समय आप अपने मित्र से टाँगे सीधी रखने के लिए सहायता ले लें या आरम्भ में दीवार का सहारा ले लें।

प्रारम्भिक अभ्यास में किसी-किसी को कुछ उत्तेजना-सी हो सकती है, किन्तु शीघ्र ही यह दूर हो जाती है। इससे प्रसन्नता और आनन्द की प्राप्ति होती है। आसन पूरा हो चुकने पर पाँच मिनट तक थोड़ा विश्राम करें और फिर एक प्याला दूध पी लें। जो लोग देर तक अर्थात् २० मिनट या आधा घण्टे तक इस आसन का अभ्यास करते हों, उन्हें आसन लगाने के बाद किसी भी प्रकार का हलका नाश्ता, दूध या अन्य कुछ, अवश्य ले लेना चाहिए। यह बहुत जरूरी है, अपरिहार्य है। गर्मी की ऋतु में इस आसन का अभ्यास अधिक देर तक नहीं करना चाहिए। सर्दी में स्वेच्छानुसार देर तक आप यह आसन लगा सकते हैं।

कुछ लोग ऐसे भी हैं, जो इस आसन को एक बार में दो-तीन घण्टे तक करते हैं। बदरीनारायण के पु० रघुनाथ शास्त्री को इस आसन में बहुत रुचि थी और वे इसका अभ्यास २ या ३ घण्टे तक करते थे। वाराणसी के एक योगी तो इस आसन में समाधिस्थ भी हो जाते थे। श्री जसपत राय, पी० वी० आचार्य जी महाराज एवं अन्य सत्पुरुष नियमित रूप से इस आसन को एक बार में ही एक घण्टे से अधिक समय तक करते थे।

लाभ

यह आसन ब्रह्मचर्य की साधना के लिए अति-लाभप्रद है। यह आप को ऊर्ध्वरेता बनाता है। इससे वीर्य-ऊर्जा आध्यात्मिक ओज-शक्ति

में परिणत हो जाती है। इसे काम-ऊर्जा का परिष्कार भी कहते हैं। इससे स्वप्न-दोष से मुक्ति मिलती है। इस आसन से ऊर्ध्वरेता योगी वीर्य-शक्ति को आध्यात्मिक शक्ति में परिणत होने के लिए ऊपर की ओर मस्तिष्क में प्रवाहित करते हैं इससे उन्हें ध्यान तथा भजन में सहायता मिलती है। इस आसन को करते समय ऐसा विचार करें कि वीर्य ओज में परिणत हो कर मस्तिष्क में सञ्चित होने के लिए मेरुदण्ड में प्रवाहित हो रहा है। शीर्षासन से स्फूर्ति और शक्ति बढ़ती है और सजीवता आती है।

शीर्षासन वास्तव में एक वरदान और अमृत तुल्य है। इसके लाभ-प्रद परिणामों एव प्रभावों का वर्णन करने के लिए कोई शब्द नहीं है। केवल इसी आसन से, मस्तिष्क को प्रचुर मात्रा में प्राण और रक्त प्राप्त हो सकता है। यह आकर्षण-शक्ति के विरुद्ध कार्य करके हृदय से प्रचुर मात्रा में रक्त खींचता है। इससे स्मरण-शक्ति में उल्लेखनीय वृद्धि होती है। वकील, सिद्ध पुरुष और चिन्तकों के लिए यह आसन बहुत उपयोगी है। इस आसन द्वारा स्वाभाविक रूप से प्राणायाम और समाधि उपलब्ध हो जाती है, किसी अन्य प्रयत्न की अपेक्षा नहीं होती। यदि आप श्वास पर ध्यान दें तो आपको विदित होगा कि यह उत्तरोत्तर शुद्ध होता जाता है। अभ्यास के आरम्भ में श्वास लेने में कुछ कठिनाई प्रतीत होगी, किन्तु अभ्यास के बढ़ने पर यह कठिनाई बिलकुल समाप्त हो जायेगी और इस आसन से आप वास्तविक आनन्द और आत्मिक स्फूर्ति का अनुभव करेंगे।

शीर्षासन के बाद ध्यान हेतु बैठने से महान् लाभ होता है। अनाहत शब्द स्पष्ट रूप से सुनायी देने लगता है। हृष्ट-पुष्ट नवयुवकों को यह आसन करना चाहिए। इस आसन से प्राप्त होने वाले लाभ असङ्ख्य हैं। इस आसन का अभ्यास करने वालों को अधिक सहवास नहीं करना चाहिए।

यह आसन सर्वरोगनाशक रामबाण औषधि है। यह मानसिक शक्तियों को प्रकाशित करता, कुण्डलिनी-शक्ति को जाग्रत करता तथा आन्त्र-

और उदर सम्बन्धी सब रोगों को दूर करता और मानसिक शक्ति को बढ़ाता है। यह शक्तिशाली रक्तशोधक तथा उत्तेजना शान्त करने वाला टानिक है। इसके अभ्यास से नेत्र, नाक, शिर, गला, पेट, मूत्राशय, जिगर, तिल्ली, फेफड़े, गुर्दा, वृहत्‌अन्त्र, बहरापन, सुजाक, मधुमेह, ववासीर, दमा, क्षयरोग, आतशक इत्यादि रोग दूर हो जाते हैं। इससे पाचन-शक्ति (जठराग्नि) बढ़ती है। इस आसन से चेहरे की झुर्रियाँ तथा भूरापन दूर हो जाता है। योगतत्त्वोपनिषद् के अनुसार जो मनुष्य इस आसन को तीन घण्टे तक करते हैं, वे काल पर विजय पा लेते हैं। स्त्रियाँ भी इस आसन का अभ्यास कर सकती हैं। उनके गर्भाशय तथा डिम्ब-सम्बन्धी रोग, यहाँ तक कि उनका बाँझपन भी दूर हो जाता है। प्राणायाम और जप इस आसन के साथ-साथ चलने चाहिए। इस आसन के अभ्यास-काल में अपने इष्ट-मन्त्र या गुरु द्वारा दिये हुए मन्त्र का जप करते रहना चाहिए।

भगवान् कृष्ण के इन अमूल्य वाक्यों को सदा याद रखें, "तस्माद्योगी भव" अर्थात् इसलिए तू योगी हो (गीता, अध्याय ६, श्लोक ४६)। टिहरी राज्य (हिमालय) के स्वर्गीय महाराजा के निजी सचिव श्री प्रकाश जङ्ग के पैरों में सूजन थी और उन्हें हृदय-रोग था। चिकित्सकों द्वारा जाँच करने पर उनके हृदय अङ्ग श्वास लेते समय भली प्रकार मिल नहीं सकते थे। तब उन्होंने नियमित रूप से कुछ दिन शीर्षासन का अभ्यास किया। उनके पैरों की सारी सूजन दूर हो गयी। अब उनका हृदय भी भली प्रकार कार्य करता है। उनके अब कोई दर्द नहीं है। वे इस आसन को नित्य आधा घण्टा करते हैं।

लखीमपुर खेरी के वकील पं० सूर्यनारायण यह आसन नित्य करते थे। इससे उनकी स्मरण-शक्ति प्रवल हो गयी थी और कमर तथा कन्धों का दर्द, जो कि बहुत पुराना जीर्ण हो गया था, पूर्ण रूप से जाता रहा।

शीर्षासन के प्रकार

(१) वृक्षासन,
(२) विपरीतकरणी-मुद्रा, और

(३) कपालासन ।
ऊपर वर्णित शीर्षासन को इन तीन नामों से भी जाना जाता है ।

(४) अर्द्ध वृक्षासन–जिस प्रकार आप शीर्षासन में खड़े होते हैं, ठीक वैसे ही खड़े हो कर घुटनों के जोड़ों से टाँगों को मोड़ लें और उन्हें जङ्घाओं के पास रखें ।

(५) मुक्त हस्त-वृक्षासन–अँगुलियों का ताला न बना कर, हाथों को शिर के दोनों ओर भूमि पर रखें ।

(६) हस्त-वृक्षासन–इस आसन में आपको केवल दोनों हाथों पर खड़ा होना पड़ता है । सर्वप्रथम अपनी टाँगों को दीवार पर लगा दें और केवल हाथों पर खड़े हो जायें । धीरे-धीरे टाँगों को दीवार से दूर हटाने की कोशिश करें । कुछ दिनों में सन्तुलन सधने लगेगा ।

(७) एक पाद वृक्षासन–शीर्षासन करने के वाद, धीरे-धीरे घुटने पर एक टाँग को झुकायें और एड़ी को दूसरी जङ्घा पर रखें ।

(८) ऊर्ध्व पद्मासन

६--सर्वाङ्गासन

यह एक रहस्यपूर्ण आसन है और आश्चर्यजनक लाभ देता है । इसे सर्व अङ्गों का आसन कहते हैं; क्योंकि इस आसन को करते समय शरीर के सब अङ्ग कार्य करने लगते हैं ।

विधि

भूमि पर एक मोटा कम्बल विछा लें और कम्बल पर यह आसन करें । कमर के बल सीधे लेट जायें । धीरे-धीरे टाँगों को उठायें । धड़, कूल्हे तथा टाँगों को बिलकुल सीधे उठायें । पीठ को दोनों ओर हाथों से सहारा दें ।

कोहनियों को भूमि पर टिकायें । ठोड़ी को सीने पर दबा कर दृढ़ता से ठोड़ी का ताला बना लें। इसे जालन्धर-बन्ध, कहते हैं। पीठ, कन्धों तथा गरदन को भूमि से सटा कर लगा लें। शरीर को हिलने अथवा इधर-उधर मत होने दें। टाँगों को सीधा रखें। आसन पूरा हो चुकने पर टाँगों को धीरे-धीरे आराम से नीचे लायें। इसमें झटका नहीं लगना चाहिए।

आसन को बड़ी गरिमापूर्वक करें। इस आसन में शरीर का सारा बोझ कन्धों पर रहता है। वास्तव में आप कोहनियों के सहारे से कन्धों पर खड़े होते हैं। गरदन के सामने निचले भाग वाले गले के पास गलग्रन्थि पर ध्यान केन्द्रित कर के श्वास को सुविधापूर्वक जितना रोका जा सके, रोकें फिर नासिका द्वारा धीरे-धीरे उसे बाहर निकाल दें।

यह आसन नित्य दो बार प्रातः एवं सायं कर सकते हैं। इस आसन के तुरन्त पश्चात् मत्स्यासन करना चाहिए, इससे गरदन के पीछे के हिस्से का दर्द ठीक हो जाता है और सर्वाङ्गासन की उपयोगिता भी सघन हो जाती है। आरम्भ में इस आसन का अभ्यास केवल दो मिनट तक करना चाहिए। धीरे-धीरे इसे आधे घण्टे तक बढ़ाया जा सकता है।

लाभ

इस आसन में गलग्रन्थि (Thyroid gland) का अच्छी प्रकार से पोषण होता है, जिसका कि शारीरिक परिवर्त्तन, विकास पोषण और संरचना में महत्त्वपूर्ण स्थान है। गलग्रन्थि (Thyroid gland) के स्वस्थ रहने का तात्पर्य है, शरीर में शुद्ध रक्त का ठीक चलना, भोजन की नली का शुद्ध रहना, मूत्राशय-सम्बन्धी यन्त्र का स्वस्थ रहना अथवा शरीर के नाड़ी-संस्थान का स्वस्थ रहना। यह गलग्रन्थि (Thyroid Gland) अन्य अन्तर ग्रन्थियों (Glands) जैसे श्लेषमा-सम्बन्धी नाड़ियाँ (Pituitary), मस्तिष्क-सम्बन्धी नाड़ियाँ (Pineal), मूत्र पिण्डों पर स्थित गुर्दा (Supreranal),

जिगर, तिल्ली इत्यादि के साथ मिल कर कार्य करती है। यदि यह गलग्रन्थि विकृत हो जाती है तो सभी ग्रन्थियाँ इससे पीड़ित हो जाती हैं। इस प्रकार एक दूषित चक्र बन जाता है। सर्वाङ्गासन गलग्रन्थि (Thyroid Gland) को स्वस्थ रखता है। स्वस्थ गलग्रन्थि से शरीर के सभी अङ्गों की क्रियाएँ समुचित रूप से होती रहती हैं।

मैंने सैकड़ों लोगों को यह आसन सिखाया है। मैंने शीर्ष-सर्वाङ्गासन का प्रचार किया है। जो लोग मेरे पास आते हैं, मैं उन्हें यही दो आसन पश्चिमोत्तानासन के साथ करने के लिए कहता हूँ। यही तीन आसन आपको पूर्ण रूप से स्वस्थ रख सकते हैं। इनको करने से दूर तक टहलने अथवा शारीरिक व्यायाम करने जैसी कोई आवश्यकता नहीं रहती। सभी ने मुझे एक स्वर से इस आसन के रहस्यपूर्ण, आश्चर्यजनक, लाभदायक परिणाम बताये हैं। इस आसन के समाप्त होते ही आपके शरीर में एक नवीन प्रकार की स्फूर्ति और स्वस्थ-भाव की अनुभूति होती है। यह एक आदर्श मानव का उत्थान करने वाला आसन है।

इस आसन से रीढ़-सम्बन्धी नाड़ियों में प्रचुर मात्रा में रक्त का सञ्चार होता है। इसी आसन से रीढ़ की हड्डी (Spinal column) में रक्त केन्द्रित हो कर उसका उत्तम रूप से पोषण करता है। इस आसन के अतिरिक्त इन नाड़ियों को पर्याप्त मात्रा में रक्त प्रदान करने का और कोई साधन नहीं है। इससे रीढ़ की हड्डी बहुत लचीली रहती है। रीढ़ की हड्डी के लचीला रहने का अर्थ है, सदा युवा बने रहना। इस आसन से रीढ़ की हड्डी को शीघ्र कड़ापन प्राप्त नहीं होता है; अतः इस आसन से आप चिरकाल तक युवा बने रह सकते हैं। वृद्धावस्था के लक्षण इस आसन द्वारा समाप्त हो जायेंगे। ब्रह्मचर्य को सुरक्षित रखने में इस आसन से अधिकाधिक सहयोग मिलता है। शीर्षासन की भाँति, यह आसन भी आपको ऊर्ध्वरेता बना देता है। यह आसन स्वप्नदोष पर नियन्त्रण रखता है। यह प्रभावशाली

रक्त-पोषक एवं रक्त- शोधक टानिक का कार्य करता है। यह नाड़ियों को शक्ति प्रदान करता है। यह आसन अत्यन्त सस्ता और सरलता से उपलब्ध होने वाला, रक्त एवं उत्तेजना को शान्त करने वाला तथा पाचन-शक्ति को बढ़ाने वाला एक टानिक है। यह सदा सबको प्राप्त है। इसके अभ्यास से आप डाक्टरों के बिलों के भुगतान से बच जायेंगे। जब आपके पास आसनों के कोर्स को पूरा करने के लिए समय न हो, तो आप इस आसन को शीर्षासन तथा पश्चिमोत्तानासन के साथ अवश्य करते रहें। यह सुजाक, मूत्राशय एवं स्त्रियों के डिम्ब-सम्बन्धी रोगों के लिए बहुत उपयोगी है। इससे बाँझपन एवं गर्भाशय-सम्बन्धी रोग दूर हो जाते हैं। महिलाएँ भी इस आसन को बिना किसी हानि के कर सकती हैं। सर्वाङ्गासन से कुण्डलिनी जाग्रत होती है और जठराग्नि तीव्र होती है। यह बदहजमी (मन्दाग्नि), मलरोध (कब्ज) एवं अन्य श्वास-सम्बन्धी आँतड़ियों के पुराने रोगों को दूर करके शक्ति, स्फूर्ति तथा नव-जीवन प्रदान करता है। शीर्ष-सर्वाङ्गासन का कोर्स प्रभावशाली ढङ्ग से नव-जीवन प्रदान करता है।

७—हलासन

इस आसन को करते समय ठीक हल जैसी स्थिति हो जाती है।

विधि

भूमि पर कम्बल बिछा कर कमर के बल लेट जायें, हाथों को दोनों ओर भूमि पर रखें, हथेलियों को भूमि की ओर करके दोनों टाँगों को मिला लें और उन्हें धीरे-धीरे ऊपर को उठायें। टाँगों को मुड़ने मत दें और हाथों को ऊपर मत उठायें। धड़ को भी मत झुकने दें। इस प्रकार अधिककोण बना लें। इसके बाद धीरे-धीरे टाँगों को नीचे करें और शरीर के ऊपर को मोड़ते जा

जब तक पाँव की अँगुलियाँ भूमि को न छू लें । घुटनों को मिला कर बिलकुल सीधे रखें। टाँगें और जङ्घाएँ एक सीधी रेखा में रहनी चाहिए । ठोड़ी को सीने के सामने दबा दें और धीरे-धीरे नासिका द्वारा श्वास लें । मुँह के द्वारा श्वास नहीं लेना चाहिए ।

इस आसन को करने की एक विधि और है। उपर्युक्त मुद्रा बनाने के बाद, धीरे-धीरे हाथों को उठा कर पैरों की अँगुलियों को पकड़ लें। यह एक श्रेष्ठ-तर विधि है। इसमें किसी भी प्रकार का झटका नहीं लगना चाहिए। आसन समाप्त हो जाने पर धीरे-धीरे टाँगों को उठा कर उन्हें भूमि पर सीधे लेटने वाली मूल-स्थिति में ले आयें ।

लाभ

इस आसन से रीढ़ की नसें, कमर के पुट्ठे, मेरुदण्ड-सम्बन्धी हड्डियों एवं संवेदनात्मक नाड़ी-प्रणाली स्वस्थ रहती हैं। यह आसन सर्वाङ्गासन का कार्य करता है तथा उससे बढ़ कर है। इससे रक्त पर्याप्त मात्रा में नाड़ियों की, रीढ़ की जड़ों में, रीढ़-रज्जु, संवेदनशील ग्रन्थियों, संवेदनशील तन्त्रिकाओं एवं पीठ की माँसपेशियों में जमा होता है, इसलिए उनका पोषण अच्छी तरह होता है। इस आसन से मेरुदण्ड बहुत अधिक मुलायम एवं लचीला हो जाता है। यह आसन मेरु-सम्बन्धी हड्डियों के शीघ्र विकास को रोकता है। अस्थियों के विकास से हड्डियों में जल्दी विकार पैदा होता है। शीघ्र अस्थि-विकास से जल्दी बुढ़ापा आता है। इस विकास-अवस्था में हड्डियाँ कठोर एवं टूटने वाली होती हैं। हला-सन करने वाला व्यक्ति अधिक फुरतीला, तेज एवं बलवान् होता है। इससे पीठ की माँसपेशियाँ क्रमशः एक-दूसरे को छूने लगती हैं, लचीली हो जाती हैं तथा वापस खिंच जाती हैं एवं फैल जाती हैं; अतः उन्हें इन विभिन्न सञ्च-लनों के द्वारा अच्छी मात्रा में रक्त प्राप्त होता रहता है और वे अच्छी तरह

पोषित होती हैं। इस आसन के अभ्यास से पुट्ठों में दर्द, कमर का शूल-रोग, मोच, तन्त्रिका-शूल जैसे रोग दूर हो जाते हैं।

इस आसन के करने से मेरुदण्ड कोमल एवं लचीला वनता है। यह केनवास शीट के टुकड़े की तरह मुड़ कर घूम जाता है। हलासन का अभ्यास करने वाला व्यक्ति आलसी कभी नहीं वन सकता। हमारे शरीर में मेरुदण्ड एक वहुत महत्त्वपूर्ण संरचना है। सम्पूर्ण शरीर इसी के सहारे रहता है। इसमें रीढ़-रज्जु, रीढ़-तन्त्रिका एवं संवेदनशील प्रणाली होती हैं। हठयोग में इसे मेरुदण्ड कहा गया है। अतः आपको इसे हलासन के अभ्यास से स्वस्थ, मजवूत एवं लचीला बनाना चाहिए। इससे पेट की माँसपेशियाँ, मलाशय-सम्वन्धी पेशियाँ एवं जङ्घाओं की पेशियाँ भी स्वस्थ एवं पोषित रहती हैं। इस आसन से मोटापा या पुराना मलरोध, रक्तावरोध, गुर्दों का बढ़ना, तिल्ली जैसे रोग समाप्त हो जाते हैं।

हलासन के प्रकार

उत्तानपादासन

जमीन पर लेट जायें। टाँगों को सीधा रखें एवं हाथों को अपने बगल में तथा हथेलियों को जमीन पर रखें। अव टाँगों एवं घुटनों को न झुकने देते हुए आप अपनी दोनों टाँगों को एकसाथ सीधे जमीन से दो फीट ऊपर उठायें। धीरे-धीरे उन्हें नीचे करें। इस प्रकार छह वार अभ्यास करें। इस आसन से आपके मलरोध, कूल्हों एवं जाँघों के दर्द दूर हो जायेंगे। यह सर्वाङ्गासन का एक प्रारम्भिक अभ्यास है।

८—मत्स्यासन

चूँकि यह आसन प्लाविनी-प्राणायाम के साथ सरलतापूर्वक जल पर तैरने में

सहायक होता है, अतः इसे मत्स्यासन अर्थात् मछली के आकार का आसन कहते हैं।

विधि

एक कम्बल बिछा कर पद्मासन लगा कर बैठें। दायाँ पैर बायीं जङ्घा पर और बायाँ पैर दायीं जङ्घा पर रखें। फिर कमर के बल सीधे लेट जायें। आगे की भुजाओं की कैंची बना कर उस पर शिर रख लें। यह एक प्रकार है।

शिर को पीछे की ओर फैलायें जिससे एक ओर आपके शिर की चोटी तथा दूसरी ओर केवल नितम्ब भाग दृढ़तापूर्वक भूमि पर टिक जायें और इस प्रकार धड़ का एक पुल-सा बन जाये। हाथों को जङ्घाओं पर रखें अथवा हाथों से पैरों की अँगुलियाँ पकड़ लें। इसमें आपको गरदन को अधिक-से-अधिक मोड़ना पड़ेगा। पहले की अपेक्षा यह प्रकार अधिक प्रभावशाली है। इस प्रकार के मत्स्यासन के लाभ पहले वाले प्रकार के मत्स्यासन से कहीं अधिक हैं।

भारी पिण्डली वाले स्थूलकाय लोग जिन्हें पद्मासन लगाने में कठिनाई होती है, साधारण रूप से बैठ कर ही इस आसन का अभ्यास कर सकते हैं। ऐसे लोग सर्वप्रथम पद्मासन का अभ्यास करें। उसमें दृढ़ता, सरलता और स्थिरता लायें, इसके बाद वे मत्स्यासन का अभ्यास करें। प्रारम्भ में आप इसे दश सेकण्ड से आरम्भ कर दश मिनट तक बढ़ा सकते हैं।

आसन समाप्त करने पर धीरे-धीरे हाथों के सहारे शिर को छोड़ कर उठें, फिर पैरों का ताला खोल दें (पद्मासन खोल दें)।

इस आसन को सर्वाङ्गासन के तुरन्त बाद करना चाहिए। इससे गरदन की कठोरता और दीर्घ काल तक सर्वाङ्गासन के अभ्यास से उत्पन्न हुई

(Cervical) ग्रीवा-प्रदेश की सङ्कीर्णता दूर होती है। ग्रीवा और कन्धों के जुड़े हुए भागों को इससे स्वाभाविक शान्तिप्रद प्रभाव अनुभव होता है और इससे सर्वाङ्गासन का सर्वाधिक लाभ मिलता है। यह सर्वाङ्गासन का पूरक है। इससे वायु-स्थान और श्वासनली खुल जाने के कारण गहरी श्वास लेने में सहायता मिलती है, फेंफड़ों के अग्रभाग को जो गले की हड्डी के ठीक पीछे एवं ऊपर होता है समुचित शुद्ध वायु एवं शुद्ध आक्सीजन प्राप्त होती है। ग्रीवा एवं पृष्ठ-सम्बन्धी नाड़ियों को प्रचुर मात्रा में रक्त प्राप्त हो कर पोषण होता है एवं वे स्वस्थ रहती हैं। इनसे अन्तःस्रावी ग्रन्थि (Endocrine) जैसे श्लेष्मास्रावी (Pituitary) और पिनिअल (Pineal) जो कि मस्तिष्क में स्थित हैं, उन्हें भी पोषण मिलता रहता है और उनका निर्माण होता है। इन ग्रन्थियों का शरीर की विभिन्न क्रियाओं में महत्त्वपूर्ण भाग है।

लाभ

मत्स्यासन अनेक रोगों का नाशक है। इससे मलरोध दूर होता है। इस आसन को करने से पेट की सञ्चित मल आदि गन्दगी मलाशय में आ जाती है। दमें का रोग, राजयक्ष्मा, पुराने जुकाम आदि के लिए भी यह आसन गहरी साँस लेने के कारण उपयोगी है।

६–पश्चिमोत्तानासन

भूमि पर बैठ कर टाँगों को लकड़ी जैसी कड़ी करके लम्बी फैला लें। दोनों हाथों के अँगूठे, तर्जनी एवं मध्यमा अँगुली से दोनों पैरों के अँगूठों को पकड़ लें। पकड़ते समय आपको धड़ को आगे की ओर झुकाना पड़ेगा। स्थूल शरीर वालों के लिए झुकना अपेक्षाकृत कठिन जान पड़ेगा। श्वास निकालिए एवं बिना झटके के धीरे-धीरे झुकिए जव तक कि मस्तक घुटनों से स्पर्श न करले। आप अपने चेहरे को दोनों घुटनों के बीच में रख सकते हैं। झुकते

समय पेट को अन्दर की ओर दबा लें, इससे आगे की ओर झुकने में सुविधा होगी। धीरे-धीरे झुकें, इच्छानुसार समय लगायें, कोई जल्दी न करें। झुकते समय दोनों भुजाओं के बीच में शिर आ जाना चाहिए और इन्हीं की सीध में यथाशक्ति रोक लेना चाहिए। युवकजन जिनकी कि रीढ़ कोमल है, प्रथम प्रयास में ही अपना मस्तक घुटनों से लगा सकते हैं। वयस्क लोग, जिनकी रीढ़ कठोर हो गयी है, उन्हें इस आसन में पूर्ण सफलता प्राप्त करने में एक पखवारा या एक मास तक लग जाता है। शिर को अपनी पूर्व-स्थिति में ले जाने तक और फिर से सीधे बैठने तक श्वास को रोके रखें। इसके वाद श्वास लें।

प्रथम आसन को पाँच सेकण्ड तक रख कर धीरे-धीरे अवधि को १० मिनट तक बढ़ायें ।

जिन्हें पूरा पश्चिमोत्तानासन करने में कठिनाई अनुभव होती हो वे पहले एक टाँग और एक हाथ से तथा वाद में दूसरी टाँग और दूसरे हाथ से आधा आसन कर सकते हैं। यह उन्हें अधिक सुविधाजनक प्रतीत होगा। कुछ समय बाद जब रीढ़ की हड्डी अधिक लचीली हो जाये तव वह पूरा आसन कर सकते हैं। आसनों के अभ्यास-काल में आपको सामान्य वुद्धि का प्रयोग करना होगा। इस आसन का प्रयोग करने से पूर्व जानुशीर्षासन पर दिये हुए निर्देशों को पढ़िए।

लाभ

यह अत्युत्तम आसन है। इससे श्वास ब्रह्म-नाड़ी और सुषुम्ना द्वारा चलने लगता है और जठराग्नि प्रज्वलित होती है। इससे पेट की चर्वी घटती है। यह आसन मोटापा, तिल्ली तथा बढ़े हुए जिगर को दूर करता है। हठयोग पर लिखी पुस्तकों में इस आसन की अत्यधिक प्रशंसा की

गयी है। जहाँ सर्वाङ्गासन अन्तःस्रावी ग्रन्थि (Endocrine gland) के पोषण के लिए है, वहाँ पश्चिमोत्तानासन पेट-सम्बन्धी आन्तरिक अङ्गों जैसे गुर्दे, जिगर और (Pancreas) क्लोमग्रन्थि-रोगों के उपचार के लिए है। यह अँतड़ियों की गति में वृद्धि करता है। पैरिस्टालसिस अँतड़ियों की क्रिया कीड़े की भाँति अमेठन-प्रक्रिया है जिससे भोजन और मल को अँतड़ियों के एक भाग से दूसरी ओर धकेला जाता है। इस आसन से मलरोध दूर होता है। जिगर की शिथिलता, अजीर्णता, डकारें आना तथा आमाशय-शोथ जैसे रोग दूर हो जाते हैं। पीठ का अकड़ना, सब प्रकार के जोड़ों के दर्द, तथा पीठ के पुट्ठों सम्बन्धी अन्य रोग दूर होते हैं। इस आसन से खूनी बवासीर (मस्से) और मधुमेह (Diabetes) के रोग में लाभ होता है। पेट के कूल्हे वाली पेशियाँ, नाड़ियों के सौर-जाल (Solar Plexus of Nerves), नाड़ियों को अधिजठिर जाल, मसाना, पुरस्थ ग्रन्थि (Prostate), शिश्न, कटि-तन्त्रिकाएँ, अनुकम्पी-रज्जु—इन सबका इस आसन से उपचार होता है, ये सब स्वस्थ हो कर ठीक स्थिति में आते हैं। पश्चिमोत्तानासन, शीर्षासन और सर्वाङ्गासन धन्य हैं और धन्य हैं वे ऋषि जिन्होंने सर्वप्रथम इन आश्चर्यजनक आसनों का हठयोग के विद्यार्थियों के लिए आविष्कार किया।

१०—मयूरासन

संस्कृत में मयूर का अर्थ मोर होता है। इस आसन के करने से आकृति पङ्खों को फैलाये हुए मोर के समान होती है। यह आसन सर्वाङ्गासन तथा मत्स्यासन से कुछ कठिन है। इसके लिए अधिक शारीरिक शक्ति की आवश्यकता होती है। कसरत करने वाला व्यक्ति इसे भली प्रकार सरलता से कर सकता है। यह कुछ अङ्गों में (Parallel Bars) समानान्तर डण्डों पर किये जाने वाले प्लैंक व्यायाम से मिलता है।

विधि

भूमि पर झुक कर पैरों की अँगुलियों के बल बैठें, एड़ियों को ऊँचा उठा कर दोनों भुजाओं के अग्र भाग को मिला लें। दोनों हाथों की हथेलियों को भूमि पर टिका दें। दोनों छोटी अंगुलियाँ एक-दूसरे के सामने (Juxtaposition) हों। अँगूठे भूमि को छूते हुए होने चाहिए। वे पैरों की ओर फैले होने चाहिए।

धड़ और टाँगों को उठाते समय पूरे शरीर को सहारा देने के लिए आपकी भुजाएँ दृढ़ और स्थिर हो गयी हैं। अब पेट को धीरे-धीरे मिलायी हुई कोहनियों के सामने नीचे लायें। अपने शरीर को अपनी कोहनियों के सहारे खड़ा कर लें जो कि नाभि (Umbilicus) से दबी हुई हैं। यह प्रथम चरण है। अब टाँगों को फैला कर पैरों को शिर के साथ एक रेखा में करते हुए भूमि के समानान्तर उठायें। यह द्वितीय चरण है।

नये साधकों को भूमि से पैर उठाने पर सन्तुलन रखना कठिन प्रतीत होता है। इसकी सुविधा के लिए सामने एक गद्दी रख लें। कभी-कभी सामने की ओर गिर जायेंगे। इससे नासिका में हलकी चोट भी आपको लग सकती है। जब आप सन्तुलन नहीं रख सकते तो पार्श्वों में गिरने का प्रयत्न करें। यदि एक बार में दोनों टाँगों को पीछे फैलाना कठिन लगे तो पहले धीरे-धीरे एक टाँग फैलायें, फिर दूसरी फैलायें। यदि आप शरीर को आगे झुकाना और शिर को नीचे की ओर करना सीख जाते हैं तो आपके पैर स्वतः ही भूमि से उठ जायेंगे और फिर आप सरलतापूर्वक उन्हें फैला सकते हैं। जब आसन पूर्ण रूप से प्रदर्शन की स्थिति में आ जाये तो शिर, धड़, कूल्हे, जङ्घाएँ, टाँगें और पैर भूमि के समानान्तर आ जायेंगे। यह आसन देखने में बड़ा सुन्दर लगता है।

प्रारम्भ में इस आसन को चारपाई की पट्टियाँ पकड़ कर किया जा सकता है। इस विधि से इस आसन को करना सरल जान पड़ेगा। यदि

आप इस आसन की विधि को समझ लेते हैं और अपनी सामान्य बुद्धि का उपयोग करते हैं तो आप अधिक कठिनाई के बिना ही सन्तुलन रख सकते हैं। स्थूल शरीर वाले व्यक्तियों को गिरने से सावधानी बरतनी चाहिए। पैरों को फैलाते समय झटका मत दें।

यह आसन पाँच से वीस सेकण्ड तक करें। जिन साधकों में शारीरिक शक्ति अच्छी है वे दो-तीन मिनट तक कर सकते हैं।

शरीर को उठाते समय श्वास को रोके रखें, इससे आपमें बहुत ताकत आयेगी। आसन की समाप्ति पर श्वास को धीरे से बाहर निकाल दें।

लाभ

मयूरासन का अपने-आपमें एक अद्‌भुत आकर्षण है। इसे आप बहुत जल्दी सीख सकते हैं। कुछ सेकण्ड में ही इससे पूरा व्यायाम हो जाता है। यह एड्रीनेलीन (Adrenalin) अथवा डिजिटेलिन (Digitalin) के अन्तात्वक (Hypodermic) इञ्जेक्शन का-सा काम करता है। यह आसन पाचन-शक्ति बढ़ाने के लिए आश्चर्यजनक है। यह अनुपयुक्त भोजन के प्रभाव को नष्ट कर पाचन-शक्ति को बढ़ाता है। भयङ्कर हलाहल विष को भी पचा कर उसके भयङ्कर प्रभाव को नष्ट करता है। इससे मन्दाग्नि (Dispepsia) एवं गुल्म आदि उदर के रोग ठीक हो जाते हैं एवं यह आन्तरिक औदरीय(इन्ट्रा ऐब्डोमिनल) के दबाव को बढ़ा कर तिल्ली तथा जिगर के बढ़ने को कम करता है। यह आन्तरिक औदरीय दवाव को बढ़ा कर फेफड़ों तथा पेट-सम्बन्धी समस्त अङ्गों को भली प्रकार सञ्जीवन प्रदान करता है। जिगर की शिथिलता इससे लुप्त हो जाती है। यह अँतड़ियों को आरोग्य रख कर कोष्ठवद्धता (चाहे वह साधारण, पुरानी कैसी भी हो) को दूर करता है और कुण्डलिनी को जाग्रत करता है।

यह आश्चर्यजनक भूख बढ़ाता है। वात, पित्त, कफ से उत्पन्न समस्त रोग इस आसन को करने से दूर होते हैं, मधुमेह तथा बवासीर आदि सब रोग दूर होते हैं एवं भुजाओं की पेशियों को शक्ति मिलती है। यह आसन थोड़े ही समय में ही आपको सर्वाधिक व्यायाम प्रदान करता है।

मयूरासन के प्रकार

(१) लोलासन—पद्मासन लगा कर मयूरासन के प्रथम चरण की स्थिति में बैठें। अब आपके शरीर का भार आपके घुटनों तथा हाथों पर होगा। फिर पद्मासन में ही शरीर के नीचे वाले भाग को धीरे-धीरे उठायें। यह एक प्रकार का पद्मासन में झूलने का आसन है। इसे लोलासन कहते हैं। यह मयूरासन का एक प्रकार है। इससे मयूरासन के लाभ प्राप्त होते हैं।

(२) हंसासन—यह बहुत ही सरल आसन है। मयूरासन का प्रारम्भिक अंश हंसासन कहलाता है। इसमें मयूरासन के लिए टाँगों को उठाने से पूर्व पैर की अँगुलियों को भूमि पर रखा जाता है।

११—अर्द्ध-मत्स्येन्द्रासन

अर्द्ध का अर्थ है आधा। यह आधा आकार है। इस आसन का नाम मत्स्येन्द्र ऋषि पर रखा गया है, जिन्होंने सर्वप्रथम हठयोग के विद्यार्थियों को यह आसन सिखाया था। मत्स्येन्द्र को भगवान् शिव का शिष्य कहा जाता है। एक बार शिवजी एकान्त द्वीप को चले गये। वहाँ उन्होंने पार्वती जी को योग के रहस्य समझाये। एक मछली समुद्र के तट के पास थी। उसने शिवजी का यह उपदेश सुन लिया और शिवजी को इसका पता चल गया उनका हृदय करुणा से द्रवित हो गया और उन्होंने इस योगी मछली पर जल

छिड़का। शिवजी की कृपा से तुरन्त वह मछली दिव्य देहधारी सिद्ध योगी बन गयी। इस योगी मछली का नाम मत्स्येन्द्र हुआ।

पश्चिमोत्तानासन और हलासन में रीढ़ की हड्डी को सामने की ओर झुकाते हैं और धनुरासन, भुजङ्गासन तथा शलभासन रीढ़ की हड्डी को पीछे की ओर झुकाने वाले विपरीत विभिन्न आसन हैं। यह पर्याप्त नहीं है-इसे मोड़ कर इधर-उधर झुकाना चाहिए। तभी जा कर कहीं मेरुदण्ड में पूर्ण लचक आती है। मत्स्येन्द्रासन इसके लिए उपयुक्त है। इसको करने से रीढ़ की हड्डी का पार्श्विक मोड़ पूर्णतया होने लगता है। कुछ हठयोगी योगिक विद्यार्थियों को व्यावहारिक शिक्षा इसी आसन से देना प्रारम्भ करते हैं।

विधि

बायीं एड़ी को गुदा (Anus) के पास और अण्डकोष (Scrotum) के नीचे रखें। यह पैरिनियल (Perennial Space) को छूती रहे। एड़ी को इस स्थान से हिलने मत दें। जननेन्द्रिय और गुदा के बीच के स्थान को पैरिनियम (Perennium) कहते हैं। दायें घुटने को झुकायें और बायें टखने को बायीं जङ्घा के मूल (Root) पर रखें और दायें पैर को बायें कूल्हे के जोड़ के पास भूमि पर टिका कर रखें। बायीं बगल या भुजा का रिक्त भाग सामने को झुके हुए घुटने पर टेकें। अब घुटने को थोड़ा पीछे को धक्का दें जिससे बगल (Axilla) के पीछे वाला भाग स्पर्श हो जाय। बायीं हथेली से बायें घुटने को पकड़ें। फिर बायें कन्धे के जोड़ पर दबाव डालते हुए धीरे-धीरे रीढ़ की हड्डी को मोड़ें और पूर्णतया दायीं ओर मुड़ जायें। अपने चेहरे को भी यथासम्भव दायीं ओर को मोड़ें और इसे दायें कन्धे से एक सीध में लायें। दायीं भुजा को पीठ के पीछे को घुमा लें। और फिर दायें हाथ से बायीं जङ्घा को पकड़ें। ५ से १५ सेकण्ड तक इस

मुद्रा में रहें। आन्त्र की दोनों पसलियों (Vertebral column) को पूर्णतया तना हुआ रखें। झुकें मत। इसी प्रकार आप रीढ़ की हड्डी को बायीं ओर मोड़ सकते हैं। यह एक पूर्ण रीढ़ का मोड़ होगा।

लाभ

यह आसन जठराग्नि को प्रज्वलित कर के क्षुधा में वृद्धि करता है। इससे भयङ्कर रोगों का नाश होता है, कुण्डलिनी जाग्रत होती है तथा चन्द्र-नाड़ी चलने लगती है। चन्द्रमा का वास तालु पर माना जाता है, जो शीतल दिव्य अमृत की वर्षा करता है; परन्तु यह जठराग्नि से मिल कर व्यर्थ हो जाता है। यह आसन उसे रोकता है।

यह आसन रीढ़ की हड्डी को लचकीली बनाता है और पेट-सम्बन्धी अङ्गों में भली प्रकार से हरकत प्रदान करता है। कमर का दर्द, कटिवात तथा अन्य सब प्रकार के नाड़ी-सम्बन्धी कमर के दर्द इससे ठीक हो जाते हैं। रीढ़-सम्बन्धी नसों की जड़ें तथा संवेदनशील प्रणाली (Sympathetic System) ठीक हो जाती हैं, उन्हें अच्छी मात्रा में रक्त मिलता है। यह आसन पश्चिमोत्तानासन का सहायक अथवा पूरक है।

१२—शलभासन

इस आसन को करने से टिड्डी जैसा आकार हो जाता है, इसलिए इसका नाम शलभासन अर्थात् टिड्डी आसन पड़ा।

विधि

पेट के बल भूमि पर लेट जायें। हाथों को दोनों ओर रखें। आपकी हथेली ऊपर की ओर को पलटी हुई होनी चाहिए।

आप हथेलियों को पेट के नीचे भी रख सकते हैं। यह एक दूसरा प्रकार भी है। हलके से श्वास खीचें (पूरक), आसन करने तक श्वास को रोकें (कुम्भक), फिर श्वास धीरे-धीरे छोड़ दें (रेचक)। पूरे शरीर को तना हुआ रखें और टाँगों को एक हाथ ऊँचा उठायें। शिर को भुजङ्गासन की भाँति उठायें। जङ्घा, टाँगों और पैरों की अँगुलियों को चित्र में दिखाये गये अनुसार रखें। पैरों के तलवे उलट लें। टाँगों, जङ्घा, और पेड़ू के नीचे के भाग को उठायें। इस आसन को ५ से ३० सेकण्ड तक रखें फिर धीरे-धीरे टाँगें नीचे ले आयें और अब धीरे-धीरे श्वास छोड़ें।

यह प्रक्रिया आप ६ से ७ बार तक दोहरा सकते हैं। आप अपने हाथों को छाती के पास भूमि पर रख सकते हैं। हथेली भूमि की ओर हो। यह एक दूसरा प्रकार है जो कि चित्र में दिखाया गया है। इन दोनों प्रकारों में विशेष अन्तर नहीं है।

लाभ

यह आसन रीढ़ की हड्डी में पश्चवक्रता (Posterior curvature) प्रदान करता है। यह रीढ़ की हड्डी को पीछे की ओर झुका देता है। रीढ़ की हड्डी को पीछे की ओर झुका कर एक प्रकार से यह पश्चिमोत्तानासन, हलासन और सर्वाङ्गासन की विपरीत मुद्रा के रूप में कार्य करता है, जिनमें रीढ़ की हड्डी आगे झुक जाती है। मयूरासन की भाँति यह अन्तर पेड़ू के दबाव को बढ़ाता है। यह भुजङ्गासन का पूरक है। भुजङ्गासन से शरीर के ऊपरी भाग का विकास होता है और शलभासन से नीचे वाले भाग का तथा नीचे के छोरों तक का भी। इससे पेड़ू, जङ्घा और टाँगों के पुट्ठे सञ्जीवित होते हैं। इससे गुदा में सञ्चित मल आरोही कोलन में उतरता है। आरोही कोलन से बड़ी आँतों के अनुप्रस्थ कोलन में और अनुप्रस्थ कोलन से अवरोही कोलन में तथा वहाँ

से गुदा-स्थान को ले जाता है। प्रारम्भिक शरीर-विज्ञान की कोई पुस्तक पढ़ने से बहुत-कुछ सहायता मिल सकती है।

इस आसन से पेड़ू का अच्छा व्यायाम होता है। कोष्टवद्धता ठीक होती है। यह पेट-सम्बन्धी अङ्गों, जैसे जिगर, क्लोम, गुर्दे आदि, को सञ्जीवित बनाता है। इससे पेट और आँतों-सम्बन्धी अनेक प्रकार के रोग दूर होते हैं। यह जिगर की शिथिलता को और कमर के कुवड़ेपन को दूर करता है। इससे कमर की हड्डियाँ (Lumbo Sacra Bones) सञ्जीवित हो जाती हैं। इस आसन से कूल्हों के सभी पुट्ठों के दर्द दूर हो जाते हैं, पाचन-शक्ति बढ़ती है तथा बदहजमी (Dyspepsia) दूर होती है। इस आसन को करने से आपको अच्छी भूख लगने लगेगी।

१३—भुजङ्गासन

भुजङ्ग का अर्थ है सर्प। इस आसन के प्रदर्शन में उठा हुआ शिर और धड़ सर्प के उठे हुए फन से मिलता है, इसलिए यह भुजङ्गासन कहलाता है।

विधि

भूमि पर एक कम्बल विछा लें और पेट के बल पीठ ऊपर करके लेट जायें। सारे शरीर के पुट्ठों को ढीला छोड़ कर आराम शिथिलावस्था में आ जायें। हथेलियों को कन्धों और कोहनियों के ठीक नीचे भूमि पर रखें। नाभि से नीचे पैरों की अँगुलियों तक का शरीर भूमि से स्पर्श करता रहे। अब शिर तथा शरीर के ऊपरी भाग को धीरे-धीरे उसी प्रकार उठायें जैसे कि सर्प अपना फन (शिर) उठाता है। रीढ़ की हड्डी को पीछे की ओर झुकायें। अब पीठ के पुट्ठे एवं कटि-प्रदेश भली प्रकार फैल गये हैं और अन्तर पेट (Intra-abdominal) का दबाव भी बढ़ गया है। अब शिर को धीरे-

धीरे नीचा कर के पूर्व-स्थिति में ले जायें। जब आप सर्वप्रथम मुँह नीचा कर भूमि पर लेटते हैं तो ठोड़ी सीने से छूनी चाहिए। इस प्रकार ठोड़ी का ताला बनाया जाता है। शिर उठाने और नीचे लाने की प्रक्रिया को स्थिरता से ६ वार दोहरायें। नासिका द्वारा धीरे-धीरे श्वास लें। श्वास को उस समय तक रोके रहें जब तक कि आप ठीक प्रकार से शिर को उठाते एवं रीढ़ की हड्डी को झुकाते रहते हैं। इसके बाद फिर आप धीरे-धीरे श्वास निकाल सकते हैं। पुनः आप शिर को नीचे लाते समय श्वास को रोकें। जैसे ही शिर भूमि से छूने लगे, फिर धीरे-धीरे श्वास लें।

लाभ

भुजङ्गासन रीढ़ की हड्डी को पीछे की ओर मोड़ता है जबकि सर्वाङ्गासन और हलासन इसे आगे की ओर मोडते हैं। इससे कुवड़ापन, कमर के दर्द, माँस-पेशियों के दर्द (Lumbago myalgia) तथा पीठ के दर्द में आराम होता है। यह आसन अन्तरपेट के दबाव को बढ़ाता है तथा सञ्चित मल को अनुप्रस्थ कोलन (Transverse colon) से गुदा की ओर नीचे लाता है; अतः इससे कब्ज का रोग दूर होता है। इससे शरीर की गर्मी वढ़ती है तथा कई बीमारियाँ नष्ट होती हैं। इससे कुण्डलिनी जाग्रत होती है जो मूलाधार-चक्र में निष्क्रिय सुप्तावस्था में रहती है। इससे भूख भी वढ़ती है।

भुजङ्गासन विशेषकर स्त्रियों के लिए उनके डिम्बाशय और गर्भाशय को सजीव करने में उपयोगी है। उनके लिए यह एक सशक्त पौष्टिक वस्तु है। इससे मासिक-धर्म ठीक प्रकार से न होने की तथा कष्ट से होने की शिकायत दूर होती है और श्वेत प्रदर रोग (Leucorrhoea) एवं अन्य विभिन्न गर्भाशय-सम्वन्धी रोग भी दूर होते हैं। इस आसन से उन अङ्गों में रक्त का सञ्चालन होने लगता है और यह एल्टेरिस कोआर्डियल

(Aleeris Cordial) से भी अधिक सशक्त है। इस आसन के अभ्यास से प्रसूति सामान्य एवं सरलता से होगी।

१४—धनुरासन

इस आसन को करते समय धनुष जैसा आकार हो जाता है। तनी हुई भुजाएँ और सामने वाली टाँगों से धनुष की प्रत्यञ्चा बन जाती है। इससे रीढ़ की हड्डी पीछे की ओर झुकती है। यह भुजङ्गासन का पूरक है। हम यह कह सकते हैं कि यह आसन एक प्रकार से भुजङ्गासन और शलभासन का सम्मिलित रूप है। इसमें इसके अलावा केवल हाथों से टखनों को और छुआ जाता है। धनुरासन भुजङ्गासन और शलभासन का महत्त्वपूर्ण समन्वय है। ये सदैव साथ-साथ ही रहते हैं। इनसें आसनों का एक कुलक बन जाता है। यह योग हलासन और पश्चिमोत्तानासन का प्रतिरूप है जिनमें कि रीढ़ की हड्डी आगे को झुकती है।

विधि

मुँह नीचे करके छाती के बल लेट जायें। सारे पुट्ठों को ढीला छोड़ दें। हाथों को दोनों ओर रखें। टाँगों को हलके से पीछे की ओर मोड़ लें। हाथों को पीछे की ओर उठायें और उनसे टखनों को पकड़ लें। छाती और शिर ऊपर उठायें। छाती को फैला लें और भुजाओं तथा सामने वाली टाँगों को बिलकुल सीधी तान कर रखें। अब एक अच्छी उत्तल(Convex)कमानी (Arch) बन गयी। यदि आप टाँगों को फैलाते हों तो आप छाती को ऊपर उठा सकते हैं। इस आसन में आपको बड़ी सावधानी के साथ अपने को सँभालना चाहिए। श्वास को हलके से रोकें और धीरे-धीरे छोड़ दें। पाँच - छः बार ऐसा करें। इस आसन-मुद्रा को जितनी देर आराम से रख सकें, रखें। घुटनें को पास-पास रखें।

इस आसन से पूरा शरीर पेट पर आधारित रहता है। इससे पेट के भाग को अच्छा लाभ मिलता है। खाली पेट होने पर यह आसन करना चाहिए। आप धनुराकार-शरीर को पार्श्व की ओर आगे और पीछे भली प्रकार हिला सकते हैं। इससे पेट की अच्छी कसरत हो जायगी। झूलें, नीचे-ऊपर होयें तथा आनन्द उठायें और ॐ - ॐ - ॐ का मानसिक जप करें।

लाभ

यह आसन पुराने कब्ज (Chronic constipation), मन्दाग्नि तथा जिगर की शिथिलता को दूर करने के लिए उपयोगी है। इससे कुबड़ापन, टाँगों तथा घुटनों के जोड़ और हाथों का गठिया एवं जोड़ों का दर्द दूर होता है। यह चर्बी कम करता है, पाचन-क्रिया को शक्ति प्रदान करता है, आन्त्र-गति को बढ़ाता है, भूख को उत्पन्न करता है तथा पेट में रक्तावरोध-सम्बन्धी विकारों को दूर करके उन्हें सञ्जीवित करता है।

जठर-आन्त्र (गैस्ट्रो-इन्टैस्टाइन) रोगों से पीड़ित व्यक्तियों के लिए धनुरासन एक वरदान है। हलासन की भाँति यह भी रीढ़ को लचीली बनाता है। यह समय से पूर्व हड्डियों की जर्जरता को रोकता है। हलासन, मयूरासन और धनुरासन करने वाला व्यक्ति सुस्त अथवा आलसी कभी नहीं हो सकता। उसमें शक्ति, स्फूर्त्ति और उत्साह हमेशा बना रहता है।

धनुरासन के प्रकार

आकर्षण धनुरासन—इस आसन को धनुरासन कहा जा सकता है। भूमि पर टाँगें फैला कर बैठें, बाँयें हाथ से दायें पैर का अँगूठा पकड़ें। धीरे-धीरे बायीं टाँग को उठा कर उँगलियों को ठोड़ी के बराबर तक और घुटने को बायीं भुजा की काँख (Armpit) तक लायें। अब जङ्घा आपके उदर-

भाग को स्पर्श करेगी। अब बायें पैर के अँगूठे को दायें हाथ से पकड़ें और कोहनी को यथासम्भव पीछे ले जायें। यह पहले वाले प्रकार से अधिक उपयोगी है।

१५—गोमुखासन

इस आसन को करने पर गाय के मुख जैसी आकृति बन जाती है; इसलिए इसका यह नाम रखा गया है। गो-मुख का अर्थ है'गऊ का मुख'।

विधि

बायें पैर की एड़ी को गुदा के बायें भाग के नीचे रखिए। दायीं टाँग इस प्रकार रखें कि दायाँ घुटना बायें घुटने के ऊपर हो और दायें पैर की तलहटी बायीं जङ्घा के सहारे सटी हुई हो। धीरे-धीरे अभ्यास करके आपको दायीं एड़ी बायें कूल्हे से छुआनी होगी। पूर्णतया तन कर बैठें और अब पीठ की तरफ हो कर दोनों तर्जनियों का ताला-सा बना लें। हाँ, आरम्भ में कुछ कठिनाई होगी। बायाँ हाथ पीठ पीछे ले जायें और बायीं तर्जनी को ऊपर उठायें। दायीं तर्जनी को नीचे की ओर लायें। इससे बायीं तर्जनी को कस कर पकड़ लें। अब अँगुली का ताला बना लें। यदि यह फिसले तो बार-बार प्रयत्न करें और ताले को दो मिनट तक स्थिर रखें। धीरे-धीरे श्वास लें। अब यह मुद्रा गऊ के मुख जैसी बन गयी। अँगुली का ताला बनाते समय शरीर को मोड़ें मत, एड़ी और सीने को मत झुकायें। धड़ को पूर्णतया सीधा रखें। हाथ-पैर क्रमानुसार बदलें। स्थूल शरीर वालों को इसमें एड़ी और जङ्घा बिठाने में तथा अँगुलियों का ताला लगाने में कुछ कठिनाई होगी; किन्तु निरन्तर अभ्यास से सब ठीक हो जायेगा।

लाभ

इस आसन से टाँगों की गठिया, जङ्घा के ऊपरी भाग के स्नायु में होने

वाली पीड़ा (Sciatica), बवासीर, मस्सा, जङ्घाओं, टाँगों का स्नायु-शूल (Neuralgia), बदहजमी, अर्जीर्ण, मन्दाग्नि, कमर के पुट्ठों में दर्द और भुज-वलियों आदि की पीड़ा ठीक होती है। इससे ब्रह्मचर्य के पालन में और सुन्दर स्वास्थ्य रखने में सहयोग मिलता है। इससे मूल-बन्ध स्वतः लग जाता है और सुविधा से रखा जा सकता है। अतः यह आसन प्राणायाम अभ्यास के लिए भी उपयोगी है। साधारणतया इस आसन में अँगुलियों का ताला बनाये बिना हर समय बैठा जा सकता है। इस आसन में देर तक ध्यान में बैठा जा सकता है। पतले-दुबले लोग जिनकी जङ्घाएँ तथा टाँगें पतली हों उन्हें इस आसन में बैठना अच्छा लगेगा। ज्वालापुर, हरिद्वार के योगी स्वामी स्वरूपानन्द इस आसन के समर्थक थे। यह उनका प्रिय आसन था। वह सदैव इस आसन में बैठते थे। यदि आप टाँगों तथा जङ्घाओं में रक्त सञ्चित होने का अनुभव करने लगें तो जैसे ही इस आसन को समाप्त करें, आप टाँगों तथा जङ्घाओं की अपने हाथों से थोड़ी मालिश करें।

गोमुखासन का एक और प्रकार है। इस प्रकार का आसन करते समय बायें हाथ की कोहनी को ऊपर उठायें और अँगुलियाँ पीठ पर ले जायें। दायाँ हाथ कमर पर ले जायें और तर्जनी को यथासम्भव ऊपर उठायें तथा तर्जनियों में हुक बनायें।

प्रकार

(१) **वाम जान्वासन**—आपको दायीं जङ्घा और घुटने को बायें के ऊपर रख कर टाँगों को गोमुखासन की भाँति रखना होगा। हाथों को सीने के पास या गोद या घुटनों पर रखा जा सकता है।

(२) **दक्षिण जान्वासन**—इस आसन में बायीं जङ्घा और घुटना दायें पर रखे जाते हैं। कुछ लोगों के लिए यह सरल रहता है।

१६—वज्रासन

इस आसन में बैठने वालों की मुद्रा दृढ़ और तनी हुई होती है। उन्हें सरलता से नहीं हिलाया जा सकता। घुटने बड़े कठोर हो जाते हैं। मेरुदण्ड और मजबूत हो जाता है। यह आसन कुछ सीमा तक नमाज-मुद्रा से मिलता है जिसमें मुसलमान लोग प्रार्थना के लिए बैठते हैं।

विधि

पैरों के तलवों को कूल्हों के दोनों ओर रखें अर्थात् जङ्घाओं को टाँगों के ऊपर और तलवों को कूल्हों पर रखें। पिण्डलियाँ जङ्घाओं से छूनी चाहिए। पैरों की अँगुलियों से घुटने तक का भाग भूमि से स्पर्श करता हुआ रहना चाहिए। शरीर का पूरा भार घुटनों और टखनों पर रहना चाहिए। अभ्यास के प्रारम्भ में घुटनों और टखनों के जोड़ों में हलकी पीड़ा अनुभव हो सकती है; किन्तु यह शीघ्र ही दूर हो जाती है। पीड़ा होने वाले अङ्गों और दोनों जोड़ों की हाथों से मालिश कर लें। आप मालिश में थोड़ा आयोडेक्स या अमृताञ्जन का प्रयोग भी कर सकते हैं।

पैर और घुटने जमाने के पश्चात् दोनों हाथ घुटनों पर रखें। घुटने पूर्णतया पास रखें। अब आप इस प्रकार बैठें कि धड़, गरदन और शिर एक सीधी रेखा में हों। यह बहुत सामान्य आसन है। इस आसन में आप बहुत देर तक आराम से बैठ सकते हैं। योगी लोग साधारणतया इसी आसन में बैठते हैं।

लाभ

यदि आप भोजन के तुरन्त बाद आध घण्टे तक इस आसन में बैठ जायें तो भोजन अच्छी तरह से पच जायेगा। बदहजमी अर्थात् मन्दाग्नि के रोगियों को इससे बहुत अच्छा लाभ होता है। टाँगों तथा जङ्घाओं की नसों एवं पुट्ठों को शक्ति मिलती है। घुटने, टाँगों और पैरों की अँगुलियों में पुट्ठों की गठिया

(Myalgia) रोग दूर हो जाता है। जङ्घा-सम्बन्धी नसों और स्नायु का दर्द (Sciatica) निर्मूल हो जाता है । पेट की वायु अर्थात् अफारा (Flatulence) दूर हो जाता है। उदर प्रबलता से क्रियाशील हो जाता है। वज्रासन के अभ्यास से कन्द पर बल-सञ्चारक एवं उपयोगी प्रभाव होता है। यह कन्द गुदा से बारह इञ्च पर स्थित अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अङ्ग है और यहाँ से बहत्तर हजार नाड़ियों का स्रोत है।

प्रकार

कुछ लोग एड़ियों को पूर्णतया अलग रखते हैं। गुदा और कूल्हे दोनों को दोनों जङ्घाओं के पास से एड़ियों और टाँगों के बीच रखा जाता है।

(१) कूर्मासन (कछुए की मुद्रा)—कूल्हों को पैरों के तलवों से दृढ़तापूर्वक दबायें। शिर, गरदन और धड़ को तना हुआ रखें और हाथों को दोनों कूल्हों पर या घुटनों पर अथवा छाती के दोनों ओर रखें।

(२) अर्ध कूर्मासन—वज्रासन की पूर्व-मुद्रा में बैठ कर हाथों को चेहरे की सीध में फैलायें। हथेलियाँ आमने-सामने हों। धीरे-धीरे झुकें और भूमि पर अपने हाथों के सहारे लेट जायें।

(३) उत्तान कूर्मासन—इस आसन में गर्भासन की तरह बैठा जाता है और हाथों को जङ्घाओं और पिण्डलियों के बीच लेना पड़ता है। गर्भासन में पद्मासन लगा कर पैर जङ्घाओं पर रखे जाते हैं; किन्तु उत्तान कूर्मासन में टखने को एक-दूसरे के ऊपर पास-पास रखा जाता है और हाथ शिर के बीच की ओर दबाये जाते हैं। इन सब आसनों से मोच और पीठ-सम्बन्धी पीड़ाएँ दूर हो जाती हैं।

(४) मण्डूकासन (मेढक-मुद्रा)—पैरों को पीछे की ओर ले जायें, पैरों की अँगुलियों को एक-दूसरे से स्पर्श कराते हुए घुटनों को दोनों पार्श्वों में रखें। हाथों को घुटनों पर रखें। यह मण्डूकासन कहलाता है।

(५) अर्ध शवासन—सुप्तवज्रासन पर निर्देशन एवं उदाहरण देखिए।

(६) पादादिरासन—कुछ लोग वज्रासन को ही पादादिरासन कहते हैं। इस आसन में आप हाथों को घुटनों पर अथवा छाती की सीध में रख सकते हैं। इसमें हथेलियाँ एक-दूसरे के सामने होनी चाहिए।

(७) पर्वतासन—वज्रासन की मुद्रा में बैठ जायें। शरीर एवं हाथों को शिर के ऊपर धीरे-धीरे उठायें। यह पर्वतासन कहलाता है। पर्वतासन के एक दूसरे अच्छे प्रकार को अन्यत्र बताया गया है।

(८) आनन्द-मन्दिरासन—वज्रासन में बैठ कर दोनों हाथों से एड़ियों को पकड़ लें।

(९) अंगुष्ठासन—ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करने के लिए यह एक महत्त्वपूर्ण आसन है। वज्रासन में बैठ कर धीरे-धीरे घुटनों को उठायें। इसी प्रकार का एक और आसन है। पादांगुष्ठानासन का वर्णन अन्यत्र देखें।

(१०) सुप्त वज्रासन—यह एक सुप्त मुद्रा है और वज्रासन का सम्मिलित रूप अथवा अर्ध शवासन जैसा है। प्रथम आपको वज्रासन में पूर्णता प्राप्त करनी होगी तभी आप इस आसन को कर सकेंगे। इसमें वज्रासन की अपेक्षा घुटनों पर अधिक दबाव तथा बल पड़ता है। अर्ध शवासन की भाँति कमर के बल लेट जायें। अँगुलियों का ताला बना लें। शिर को हथेलियों पर टिका लें। अँगुलियों का ताला बनाने के बजाय आप हाथों को मत्स्यासन (प्रथम प्रकार) की भाँति

भी रख सकते हैं । प्रारम्भ में पीठ का पूर्ण भाग भूमि को नहीं छूना चाहिए । नीचे का भाग भूमि से उठा रहेगा । कुछ दिनों के अभ्यास से आप यह आसन सन्तोषपूर्ण ढङ्ग से करने लगेंगे ।

इस आसन से आपको वज्रासन के सम्पूर्ण लाभ प्राप्त होंगे । इससे कुबड़ापन दूर हो जाता है; क्योंकि इसमें रीढ़ की हड्डी पीछे को झुक जाती है । रीढ़ में लचक भी आती है । इस आसन को करने वाले व्यक्ति के लिए चक्रासन लगाना बड़ा सुगम रहेगा ।

साधारणतया सिद्धासन को भी वज्रासन कहा जाता है ।

१७—गरुड़ासन

इस आसन को करने से गरुड़ जैसी मुद्रा बन जाती है; इसलिए इसे गरुड़ासन कहते हैं ।

विधि

पहले बिलकुल सीधे खड़े हो जायें । दायीं टाँग को सीधे भूमि पर रखें । बायीं टाँग को उठा कर दायीं टाँग के चारों ओर रस्सी की भाँति लपेट लें । बायीं जङ्घा तथा दायीं जङ्घा से कैंची बना लें । जैसे वृक्ष के चारों ओर बेल चढ़ती है उसी भाँति बायीं जङ्घा दायीं जङ्घा के चारों ओर घुमा कर ले जायें । हाथों को भी उसी प्रकार रखें अर्थात् एक भुजा दूसरी भुजा के चारों ओर रस्सी की भाँति लपेटें । हथेलियाँ आमने-सामने रहनी चाहिए । अँगुलियों को गरुड़ की चोंच के समान रखें । हाथों को चेहरे के सामने रखें । टाँगों और हाथों को क्रमानुसार बदल लेना चाहिए । जब आप ऊपर दिये गये निर्देशानुसार खड़े हो जायें तो स्थिरता के साथ झुकें और घूमने वाली टाँग के अँगूठे

से भूमि को छूने का प्रयत्न करें। तभी आपको इस आसन का सर्वाधिक लाभ प्राप्त होगा। झुकते समय आप किसी की सहायता ले सकते हैं। दोनों टाँगें झुकानी पड़ती हैं। इन आसन में स्थित हो कर आप वस्ति-क्रिया भी कर सकते हैं।

लाभ

इस आसन से शरीर का पूरा भार एक टाँग पर आता है, जबकि कुक्कुटासन में शरीर का सारा भार दोनों हाथों पर आता है। इस आसन से टाँगों और हाथों की नसें और हड्डियाँ बलवती होती हैं। हाथ और टाँगें लम्बी हो जाती हैं। इस आसन के अभ्यास से मनुष्य लम्बा हो सकता है। गुर्दों की आँतें भी बलवती होती हैं। साइटिका तथा टाँगों और हाथों के गठिया रोग को आराम होता है। मेरुदण्ड की हड्डियाँ (Vertebral column) विकसित हो कर दृढ़ होती हैं। अण्डकोश-वृद्धि (Hydrocele) और अण्ड-ग्रन्थियों (Testicles) की सूजन ठीक हो जाती है। पिण्डलियों की पेशियाँ विकसित होती हैं। टाँगों और हाथों की नसें बलवान् होती हैं।

१८—ऊर्ध्व पद्मासन

विधि

पहले बताये अनुसार शीर्षासन करिए। धीरे-धीरे दायीं टाँग को झुका कर बायीं जङ्घा पर रखिए और फिर इसके बाद बायीं टाँग दायीं जङ्घा पर रखिए। यह बहुत सावधानी और धीरे से करना चाहिए। शीर्षासन में १० या १५ मिनट से अधिक खड़ें रह सकने पर ही आप इस आसन का अभ्यास कर सकते हैं। अन्यथा आपके गिरने की सम्भावना रहेगी। कसरत करने

वाला व्यक्ति जो सामानान्तर छड़ों (पैरेलल बार्स Parallel bars) या भूमि पर अपना सन्तुलन रख सकता है, वही साधक यह आसन सरलतापूर्वक कर सकता है। इस आसन के अभ्यास में कुछ शक्ति का होना आवश्यक है। धीरे-धीरे नासिका द्वारा श्वास लें, मुँह द्वारा कभी नहीं। प्रारम्भ में इस मुद्रा में ५ से १० मिनट तक रहें और धीरे-धीरे समय बढ़ाते जायें।

प्रारम्भ में इस आसन को चार तह किये गये कम्बल पर किसी दीवार के सहारे करें। इस आसन में अन्य प्रकार भी होते हैं; परन्तु वे अधिक उपयोगी नहीं हैं।

कुछ लोगों को प्रथम पद्मासन लगाना आसान लगेगा। इस आसन को लगाने के बाद वे धीरे-धीरे अपनी टाँगें (आसन) उठायेंगे। अनुभवी लोग पद्मासन को नीचे भूमि पर कर सकते हैं। फिर पहले की भाँति टाँगों को ऊपर उठा सकते हैं। इस आसन का अभ्यास करने वालों को आसन करने के बाद हलका-सा नाश्ता, एक प्याला दूध या फलों का रस लेना चाहिए। शीर्षासन एवं ऊर्ध्व पद्मासन करने वालों को ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करना चाहिए। तभी वे इससे अधिकतम लाभ प्राप्त कर सकेंगे।

लाभ

आसन करते हुए यदि किसी भी प्रकार की प्रार्थना या जप किया जाता है तो यह तप भी हो जाता है इससे आपको सिद्धियाँ प्राप्त होंगी। प्राचीन काल में, तपस्वी लोग १२ वर्ष तक शिर के बल खड़े रह कर अपने इष्टदेवता अथवा गुरु का मन्त्र जपते थे। महाभारत में ऐसे कई उदाहरण मिलेंगे। ऊर्ध्व पद्मासन अथवा शीर्षासन में जप या ध्यान गम्भीरता से ईश्वर का हृदय स्पर्श करता है और शीघ्र ही वह अपनी कृपा-दृष्टि करता है। इस आसन से अनेक कठिनाइयाँ दूर होंगी। ऊर्ध्व पद्मासन से शीर्षासन के सारे लाभ प्राप्त

हो जाते हैं। इस आसन का अभ्यास करने वाला व्यक्ति अपने शरीर पर पूरा नियन्त्रण रखता है।

लखीमपुर के पं० श्री सूर्यनारायण वकील इस आसन को करते थे। उनकी स्मरण-शक्ति बहुत बढ़ गयी थी। इस आसन से एम० एस-सी० कक्षा के विद्यार्थी श्री गङ्गाप्रसाद एवं कलकत्ता मेडिकल कालेज के एक छात्र नरेन्द्र का स्वप्नदोष जैसा विकार जाता रहा तथा जज केदार नाथ न्यायालय में दुगुना कार्य करने लगे और कई घण्टों तक पुस्तकें पढ़ने लगे। आप भी नियम-पूर्वक इस आसन को हार्दिक भाव से अभ्यास कर के पूर्ण रूप से स्वस्थ रह सकते हैं।

१६—पादांगुष्ठासन

स्थूल शरीर वालों के लिए यह आसन कुछ कठिन प्रतीत होगा। एक तरफ अथवा कभी सामने कभी पीछे उन्हें हचकोले खाना पड़ता है। थोड़े से निरन्तर अभ्यास से ठीक हो जायेगा। प्राचीन काल में गुरुकुलों के नैष्ठिक ब्रह्मचारी प्रतिदिन यह आसन किया करते थे। प्राचीन काल के ऋषिगण वीर्य-रक्षा के लिए ब्रह्मचारियों को शीर्षासन तथा सर्वाङ्गासन के साथ यह आसन कराया करते थे।

विधि

बायीं एड़ी को गुदा अथवा पेरिनिअम, जो कि गुदा एवं जननेन्द्रिय के बीच का स्थान होता है, के बीच में सीधे रखें। शरीर का सारा बोझ पैरों की अँगुलियों पर, विशेषकर बायें अँगूठे पर, रखें। दायाँ पैर घुटने के पास जङ्घा पर रखें और अब सावधानी से सन्तुलन बनाते हुए बैठें। यदि स्वतन्त्र रूप से इस आसन को करने में आप कठिनाई अनुभव करें तो आप अपने हाथ बेञ्च पर रख कर या दीवार के सहारे बैठ कर बेञ्च की

सहायता ले सकते हैं। हाथों को कूल्हों के पार्श्व में रखें और श्वास को जितनी सुगमता से रोक सकें, रोक लें। धीरे-धीरे श्वास लें। अपने सामने दीवार पर किसी सफेद या काले बिन्दु पर दृष्टि जमा कर देखें और इस आसन को करते समय अपना गुरु-मन्त्र अथवा राम-नाम जपें।

लाभ

पेरिनियल (perineal) अर्थात् उत्सर्गान्तराल-स्थान चार इञ्च चौड़ा होता है। उसके नीचे वीर्यवाहिनी नाड़ी अथवा वीर्य-नाड़ी होती है जो कि वीर्य को अण्डकोष से ले जाती है। इस नाड़ी को एड़ी से दबाने से वीर्य का बाह्य प्रवाह रुक जाता है। इस आसन के निरन्तर अभ्यास से स्वप्न-दोष अथवा अनैच्छिक वीर्य-संस्खलन को रोक कर साधक ऊर्ध्वरेता योगी अर्थात् वह योगी वन जाता है जिसमें वीर्य की गति ऊपर मस्तिष्क की ओर प्रवाहित हो कर वहाँ ओजस शक्ति अथवा आध्यात्मिक-शक्ति के रूप में सञ्चित होती है। शीर्षासन, सर्वाङ्गासन, सिद्धासन, भुजङ्गासन और पादांगुष्ठासन आदि का सामूहिक रूप से अभ्यास ब्रह्मचर्य-रक्षा के लिए अत्यन्त उपयोगी है। प्रत्येक आसन का अपना विशिष्ट प्रभाव होता है। सिद्धासन और भुजङ्गासन का प्रभाव अण्डग्रन्थि (Testicles) एवं उसके कोशों पर होता है और इससे शुक्राणुओं की रचना रुकती है। शीर्षासन और सर्वाङ्गासन वीर्य को मस्तिष्क की ओर प्रवाहित होने में योग देते हैं। इसी प्रकार पादांगुष्ठासन वीर्यवाहिनी नाड़ियों पर सक्रिय प्रभाव डालता है।

२०—त्रिकोणासन

विधि

सीधे खड़े हो जायें। टाँगों को दो फीट की दूरी पर रखें। अब हाथों को

कन्धों की समरेखा में सीधे फैलायें। अब आपकी भुजाएँ भूमि के बिलकुल समानान्तर (Parallel) होनी चाहिए। व्यायाम का यह अंश तो आपने अपने स्कूलों में व्यायाम-कक्षा में किया होगा। अब धीरे-धीरे दायीं ओर झुकें। बायाँ घुटना सीधा और तना हुआ रखें। ऐसा करना महत्त्वपूर्ण है। दायें पैर के अँगूठे को दायें हाथ की अँगुलियों से स्पर्श करें। गरदन को थोड़ा-सा दायीं ओर झुकायें। यह दायाँ कन्धा स्पर्श कर सकती है। अब वायीं भुजा को ऊपर की ओर फैलायें। इस मुद्रा को २ या ३ मिनट रखें। धीरे-धीरे श्वास लें। तत्पश्चात् वायीं ओर से आप अभ्यास कर सकते हैं। वायें हाथ की अँगुलियाँ बायें पैर के अँगूठे को स्पर्श करें। अब पहले की भाँति दायीं भुजा को ऊपर की ओर फैलायें। प्रत्येक ओर से ३ से ६ बार तक इस प्रकार का अभ्यास करें।

लाभ

यह आसन रीढ़ के क्रम को बहुत अच्छा पार्श्विक हलचल प्रदान करता है। यह अर्धमत्स्येन्द्रासन का सहायक है। यह मत्स्येन्द्रासन को बढ़ा कर पूर्त्ति प्रदान करता है। श्री मुलर ने भी अपनी प्राकृतिक चिकित्सा व्यायाम-पद्धति में इस आसन का वर्णन किया है। यदि आपकी रीढ़ स्वस्थ है तो आप एक ही आसन में कई घण्टे तक विना थकान के ध्यान में बैठ सकते हैं। योगी के लिए मेरुदण्ड (रीढ़) बहुत आवश्यक अङ्ग है; क्योंकि यह रीढ़-रज्जु एवं संवेदनशील प्रणाली (Sympathetic system) से सम्बन्धित है। रीढ़ में ही सुषुम्ना-नाड़ी होती है जिसका कि कुण्डलिनी-सञ्चालन में महत्त्वपूर्ण भाग है। इस आसन से रीढ़-सम्बन्धी शिराएँ और पेट के अङ्ग सञ्जीवित होते हैं और यह आँतों की क्रिया को बढ़ा कर भूख को जाग्रत करता है। शरीर हलका हो जाता है। जिनकी टाँगें, कूल्हे या जङ्घा की हड्डी या टाँगों की हड्डी टूट (Fracture) जाने के कारण छोटी हो जाती है, उन्हें इस आसन को करने से लाभ होगा। इससे टाँगें बढ़ती हैं। सीतापुर के वकील कृष्णकुमार भार्गव

ने तीन महीने तक इस आसन का अभ्यास किया। इससे उनकी टाँगें बढ़ गयीं और अब वे एक या दो मील चल सकते हैं।

२१—बद्ध पद्मासन

(यह पद्मासन का एक प्रकार है)

विधि

टाँगों की कैंची बना कर पद्मासन में बैठ जायें। एड़ियाँ पेट के निचले भाग को स्पर्श करें। फिर अपना दायाँ हाथ पीठ के पीछे ले जायें। दायें हाथ की तर्जनी तथा बीच वाली अँगुली से दायें पैर का अँगूठा पकड़ें। फिर आप अपना बायाँ हाथ पीछे ले जा कर बायें हाथ की तर्जनी तथा बीच की अँगुली से बायें पैर के अँगूठे को पकड़ें। अब ठोड़ी को सीने पर दबायें, नासिका के अग्र भाग पर दृष्टि जमायें और धीरे-धीरे श्वास लें।

कुछ साधकों को दोनों अँगूठे एक साथ पकड़ने में कठिनाई अनुभव होती है। वे लोग आरम्भ में एक महीने तक अर्ध बद्ध पद्मासन का अभ्यास कर सकते हैं। कालान्तर में वे पूर्ण बद्ध पद्मासन कर सकते हैं। इस अर्द्ध बद्ध पद्मासन को दायीं ओर से करें और फिर बारी-बारी से बायीं ओर से भी। पूरी मुद्रा बनाने में कुछ समझदारी बरतनी चाहिए। पहले एक अँगूठा पकड़ें और जब आप दूसरा अँगूठा पकड़ने का प्रयत्न करें तो शरीर को आगे झुकायें। इससे दूसरा अँगूठा पकड़ने में आसानी रहेगी। अर्ध मुद्रा में एक अँगुली से पैर के अँगूठे को पकड़ लें। इसके बाद फिर दूसरी ओर से करें। अर्द्ध मुद्रा पूर्ण मुद्रा के लिए एक प्रकार से तैयारी की अवस्था है।

यह आसन ध्यान के लिए नहीं है। यह मुख्यतया स्वास्थ्य, शक्ति और

स्फूर्ति को प्रचुर मात्रा में बढ़ाने के लिए है। इस आसन से पद्मासन के लाभ अत्यधिक मात्रा में उपलब्ध होते हैं। कम-से-कम छह महीने तक इस आसन का नियमित अभ्यास करना चाहिए। तभी अधिकतम लाभ का अनुभव होगा। इस आसन में कुछ मिनट बैठने मात्र में ही इस आसन के पूर्ण लाभों की आशा नहीं की जा सकती। आपको कम-से-कम इस आसन को आधा घण्टे तक करना चाहिए। यदि आप इस आसन को घण्टे या डेढ़ घण्टे तक कर सकते हैं तो निःसन्देह इससे आपको अत्यधिक लाभ प्राप्त होगा। ऐसे भी साधक हैं जो इस आसन को पूरे तीन घण्टे तक करते हैं। ये लोग कितने दृढ़ और धैर्यवान् होते हैं। इनका स्वास्थ्य और शक्ति आश्चर्यजनक है और इनकी जीवन-शक्ति उच्च स्तरीय है। इस आसन से कई प्रकार के रोग दूर होते हैं। पेट, जिगर, तिल्ली और आँतों के अनेक पुराने रोग, जिन्हें एलोपेथिक डाक्टरों और आयुर्वेद के कविराजों ने असाध्य घोषित कर दिया हो, वे भी इस आसन के निरन्तर अभ्यास से ठीक हो जाते हैं। इस आसन की उपादेयता में सन्देह नहीं है। पेट के रोग जैसे पुरानी अमाशय-शोध की शिकायत (Chronic gastritis), मन्दाग्नि, बदहजमी(Dyspepsia ', अफारा (flatulence), बड़ी आँत में पीड़ा (Colic), खूनी पेचिश, संग्रहणी (Dysentry), जलोदर (Ascites), कोष्टबद्धता (कब्ज) (Constipation), अम्लपित्त (Acidity) डकारें आना (belching), पुराना कमर का दर्द (Chronic Lumbago) आदि कष्ट इससे दूर होते हैं। क्योंकि इससे मेरुदण्ड सीधा तना हुआ रहता है, इसलिए इस आसन से कूबड़पन भी दूर होता है। कमर, कूल्हे, पैरों और टाँगों की नसें शुद्ध होती हैं। तिल्ली और जिगर के बढ़ने की बीमारी ठीक होती है। जिगर की जड़ता दूर हो जाती है। इस आसन से नाभि के पीछे सूर्य-चक्र पर प्रबल प्रभाव पड़ता है और यह उसमें शक्ति का सञ्चार करता है। इससे अत्यधिक शक्ति प्राप्त होती है।

पेट को पीछे और ऊपर की ओर खींचें। 'ॐ' अथवा 'राम' का मानसिक

जप करें और यह भावना करें कि वीर्य-शक्ति मस्तिष्क की ओर प्रवाहित होती हुई ओज-शक्ति के रूप में परिणत होने हेतु जा रही है। यह विशेष अभ्यास प्रतिदिन दश मिनट तक करिए। आपको स्वप्नदोष नहीं होंगे। यह प्रक्रिया ब्रह्मचर्य पालन हेतु अत्यन्त उपयोगी है।

२२—पादहस्तासन

इस आसन को खड़ा हुआ पश्चिमोत्तानासन कहा जा सकता है; क्योंकि इस आसन की विधि वही है। भेद इतना ही है कि इस आसन को खड़े हो कर करना होता है। कुछ लोग इसे 'हस्तपादाङ्गासन' कहते हैं।

विधि

सीधे खड़े हो जायें। हाथ दोनों पार्श्वों से मिले हुए लटके रहें। एड़ियों को पास-पास और अँगूठे दूर-दूर रखें। हाथों को शिर के ऊपर उठायें और शिर को धीरे-धीरे नीचे झुकायें। घुटनों को तना हुआ और सीधा रखें। टाँगों को घुटनों पर से मत मोड़ें। कोहनियों को बिना झुकाये हाथों को धीरे-धीरे नीचे लायें और केवल अँगूठे, तर्जनी तथा बीच की अँगुली से पैर का अँगूठा पकड़ें। झुकते समय श्वास धीरे-धीरे बाहर निकालें और पेट को अन्दर ले जायें। माथे को घुटनों के बीच में रखें। चेहरा घुटनों के बीच खाली भाग में समा जायेगा या शिर को दोनों जङ्घाओं के बीच में आगे धकेला जा सकता है। हाथ-पैरों के पारस्परिक परिवर्त्तन द्वारा इस आसन के विभिन्न प्रकार हो जाते हैं। उनका यहाँ विस्तृत वर्णन नहीं किया गया है और इन विभिन्न प्रकारों से कोई लाभ भी नहीं। इस आसन को दो से दश सेकण्ड तक रखिए। स्थूल शरीर वालों को प्रारम्भ में इस आसन के अभ्यास में कठिनाई अनुभव होगी। दृढ़ता एवं धैर्य रखने से वे अल्पकाल में ही यह आसन भली प्रकार करने लगेंगे।

पीठ को खींचते समय पेट के पुट्ठों और गुदा (Rectum)-स्थान को सिकोड़ना होगा।

यदि कूल्हों के पुट्ठों के कठोर होने एवं पेट में चर्बी की अधिकता होने के कारण आपको पैरों की उँगलियों को पकड़ने में कठिनाई होती हो, तो आप घुटनों को थोड़ा झुका सकते हैं। पैरों की उँगलियों को पकड़ने के पश्चात् टाँगों को सीधी करके तान लें। यह एक युक्ति है। इस आसन के करने से पूर्व आप थोड़ी मात्रा में जल पी सकते हैं।

लाभ

इस आसन के अनेक लाभ हैं। अभ्यास की समाप्ति पर आपको स्फूर्तिदायक अनुभूति होगी। बहुत-सा तामस (भारीपन) नष्ट होने के कारण, शरीर हलका हो जाता है। इस आसन से शरीर का मोटापन दूर होता है। टाँगों या जङ्घाओं की हड्डियों के टूटने के कारण यदि टाँग छोटी हो गयी हो तो वह भी ठीक हो सकती है। तीन महीने तक इस आसन का अभ्यास करने से तथा सरसों के तेल में थोड़ा नमक डाल कर मालिश करने से टाँग कुछ बढ़ जाती है। नमक से तेल शरीर में शीघ्रता से रम जाता है। इस आसन से अपान-वायु के स्वतन्त्र रूप से नीचे आने में सहायता मिलती है। सुषुम्ना-नाड़ी शुद्ध हो कर सशक्त बनती है। इस आसन से भी पश्चिमोत्तानासन के लाभ प्राप्त होते हैं।

प्रकार

(१) पादहस्तासन (दूसरा प्रकार)—सीधे खड़े हो जायें। धीरे-धीरे बायीं टाँग उठा कर अपनी अँगुलियों से पैर का अँगूठा पकड़ें। दायाँ हाथ कमर पर रखें। टाँगों को झुकने मत दें। कुछ लोग इसको पादहस्तासन कहते हैं।

(२) ताड़ासन (वृक्षासन)—यह विद्यालय के विद्यार्थियों की ड्रि का सुपरिचित व्यायाम है। एक हाथ को शिर से ऊपर बड़ी शीघ्रत से उठायें। शिर को मत झुकायें। फिर उसको पूर्व स्थिति में ले आयें। ऐसा ह फिर दूसरे हाथ से करें। जितनी बार कर सकें, इसको दोहरायें। हाथ क एक ही बार में सीधे शिर के ऊपर ले जाने के बजाय, आप उसे जब वह कंधे की सीध में भूमि के समानान्तर आये, तब थोड़ा रोक सकते हैं। दोनों हाथ को आप साथ-साथ भी ले जा सकते हैं। यह आसन कर चुकने पर, हाथ कंधे आदि के पुट्ठों की थोड़ी मालिश कर देनी चाहिए। यह आसन वृक्षासन भ कहलाता है। शीर्षासन को भी वृक्षासन कहते हैं। एक टाँग पर सीधे खड़े ह जायें तथा दूसरी को दूसरी जङ्घा के मूल (Root) पर रखें। यह वृक्षास का एक प्रकार है।

(३) उत्थित विवेकासन—खड़े हो कर जप तथा प्राणायाम कर के लिए यह अत्यन्त उपयोगी है। सीधे खड़े हो जायें। आप अपने हाथों क कोहनी से मोड़ कर सीने के पास रखें।

(४) पूर्णपादासन—यदि हाथों को पार्श्वों में रख कर सीधा खड़ा ह जाये तो पूर्णपादासन कहलाता है।

२३—मत्स्येन्द्रासन

(पूर्ण मुद्रा—रीढ़ को मोड़ना)

जिन्होंने कुछ दिनों तक अर्ध मत्स्येन्द्रासन का अभ्यास कर लिया है वे अब पूर्ण मत्स्येन्द्रासन कर सकते हैं। अर्ध मत्स्येन्द्रासन की अपेक्षा पूर्ण मत्स्ये न्द्रासन कुछ कठिन है। मालसर (गुजरात) के प्रसिद्ध हठयोगी स्वर्गीय श्री माधवदास जी महाराज अपने शिष्यों को सीधे यही आसन सिखाया करते थे। इस आसन का नाम मत्स्येन्द्र ऋषि के नाम पर रखा गया है।

विधि

टाँगे फैला कर सीधे वैठ जायें। बायें पैर को दोनों हाथों से बलपूर्वक दायीं जङ्घा के जोड़ पर और बायें पैर की एड़ी को नाभि पर रखें। दायीं टाँग को बायें घुटने के पार्श्व में जमीन से स्पर्श करने दें। बायें हाथ को दायें घुटने के बाहर रखें और घुटने को बायीं ओर दबायें। बायें हाथ के अँगूठे, तर्जनी और मध्यमा अँगुलियों से दायें पैर के अँगूठे को पकड़ लें। दायाँ पैर दृढ़ रहना चाहिए। दायाँ हाथ पीठ की ओर ले जा कर बायीं एड़ी को पकड़ें। मुँह और शरीर दाँयें पार्श्व को मुड़ जाते हैं। रीढ़ को मोड़ें। नासाग्र भाग पर दृष्टि जमाये रखें और धीरे-धीरे श्वास लें। इस आसन में बीस सेकण्ड तक रहें। आप शनैः शनैः अभ्यास बढ़ाते हुए २, ३ मिनट तक कर सकते हैं। इस क्रम को कई बार दोहरा सकते हैं। यह विधि कठिन प्रतीत होती है। आपके सावधानी से ध्यान दे कर तथा एकाग्र चित्त से विचार करने पर यह आसन बहुत स्पष्ट और सरल हो जायेगा या आप अपने किसी मित्र को यह आसन करते हुए एक बार देखें।

यह आसन दायें तथा बायें दोनों पार्श्वों से क्रमानुसार करना चाहिए। तभी इस आसन से सर्वाधिक लाभ प्राप्त होता है। पहले, २ या ३ सप्ताह तक अर्ध मत्स्येन्द्रासन करके फिर मत्स्येन्द्रासन के लिए प्रयत्न करें। इसके बाद फिर पुट्ठे और जोड़ अधिक मुड़ने वाले एवं लचीले हो जायेंगे। यदि सन्तुलन बनाये रखने में कठिनाई हो तो आप अपना हाथ पीठ पर रखने के बजाय हथेली भूमि पर रख सकते हैं। इससे आपको अच्छा सहारा मिलेगा एवं कार्य सरल हो जायेगा। धीरे-धीरे आप हथेली को भूमि से हटा कर पीठ की ओर ले जा सकते हैं।

लाभ

अर्ध मत्स्येन्द्रासन से होने वाले सभी लाभ इस आसन से अधिक मात्रा में प्राप्त होते हैं। जोड़ों का सन्धि-रस (Synovial Fluid) बढ़ता है।

तथा जोड़ों में स्फूर्त्ति आती है। गठिया के कारण आयी हुई जोड़ों की चिपकन Adhesion) दूर हो जाती है। इससे स्वास्थ्य सुन्दर होता है तथा प्राण-शक्ति बढ़ती है जिसके फलस्वरूप असंख्य रोगों का निवारण होता है। नाभि के ऊपर पड़ने वाले एड़ी के दबाव से रक्त का प्रवाह पीठ की ओर होता है जिससे पीठ की समस्त नसों को विशेषकर पीठ की प्राणवाहिनी नाड़ियों को सम्यक् सम्पोषण मिलता है। इससे कुण्डलिनी जाग्रत होती है और चित्त को शान्ति मिलती है। योगी मत्स्येन्द्र धन्य हैं, धन्य हैं ! जिन्होंने हठ-योग के विद्यार्थियों में सर्वप्रथम इस आसन को चलाया। परम ऋषियों को नमस्कार है !

२४—चक्रासन

बहुत से नट लोग (Acrobats) इस आसन को सड़कों पर दिखाते हैं। छोटे बच्चे इस आसन को सरलतापूर्वक कर सकते हैं; क्योंकि उनकी रीढ़ बहुत लचकीली होती है। बड़ी आयु में जब रीढ़ कठोर हो जाती और मुड़ जाती है, तब रीढ़ का मुड़ना कठिन हो जाता है। यह आसन चक्र की भाँति होता है; अतः इसे चक्रासन का विशिष्ट नाम दिया गया है। वास्तव में यह चक्र की अपेक्षा एक धनुष से अधिक मिलता हुआ होता है।

विधि

खड़े हो कर हाथों को ऊपर ऊँचे उठायें। शरीर को मोड़ते हुए धीरे-धीरे पीछे की ओर झुकायें। जब आपके हाथ पीछे की ओर कूल्हों की सीध में आ जायें तब टाँगों को धीरे-धीरे घुटनों पर झुकायें। इससे आपको और अधिक झुक कर अपने हाथों से भूमि को छूने में सहायता मिलेगी। जल्दी मत करें। सन्तुलन ठीक करके इसे धीरे-धीरे करें अन्यथा गिरने का भय रहता है। भूमि पर एक मोटा कम्बल बिछा कर उसके ऊपर इस आसन का अभ्यास

करें। प्रारम्भ में आप यह आसन दीवार के पास कर सकते हैं, अथवा आप अपने मित्र से अपने कूल्हों को कस कर पकड़वा लें और फिर झुकें।

इस आसन को करने की एक और विधि है, जो वृद्ध लोगों के लिए उपयोगी है। इसमें गिरने का भय बिलकुल नहीं रहता। पीठ के बल लेट जायें। पाँव के तलवे और हथेलियाँ भूमि पर रखें। आपकी हथेलियाँ आपके शिर की ओर होनी चाहिए और कोहनियाँ ऊपर की ओर। अब अपनी एड़ियों को भूमि पर हथेलियों के पास लायें और अपने शिर को ऊपर उठायें। इस प्रकार रीढ़ को मोड़ें। इसके निरन्तर अभ्यास से रीढ़ को अत्यधिक लचकीली बनाया जा सकता है। रीढ़ का लचकीली होने का तात्पर्य है सदा युवा बने रहना। कठोर रीढ़ की हड्डी वाला व्यक्ति प्रारम्भ में अर्ध चक्र बना सकता है। दो सप्ताह के अभ्यास से समस्त कठोर अङ्ग लचकीले बन सकते हैं। और, यह आसन करते समय आप अपने हाथों से एड़ियाँ पकड़ सकते हैं।

लाभ

इस आसन का अभ्यास करने वाला व्यक्ति अपने शरीर पर पूरा नियन्त्रण कर लेगा। वह स्फूर्त्तिवान् और हलका हो जायेगा और थोड़े समय में अधिक कार्य कर सकेगा। इस आसन से शरीर के सभी अङ्गों को लाभ मिलता है। यदि आप देर तक इस आसन को करने में असमर्थ हो जायें तो भूमि पर सीधे लेट जायें और फिर उठ जायें। इस आसन में जब आप अपने को उठायें तो आपका शरीर हलका हो जायेगा। आपको अपनी भावना में एक दम सञ्जीवनी-शक्ति प्राप्त होगी और आप सक्रिय हो कर कार्य करने के लिए तैयार हो जायेंगे। यदि सर्वाङ्गासन के अभ्यास के पश्चात् गरदन और कन्धों में पीड़ा अनुभव हो तो तुरन्त कुछ मिनटों के लिए इस आसन को कर लें, इससे पीड़ा दूर हो जायेगी; क्योंकि यह गरदन को पीछे की ओर झुकाता है। इस प्रकार यह सर्वाङ्गासन की विपरीत-मुद्रा है। धनुरासन, शलभासन और भुजङ्गासन के अन्य सब लाभ इस आसन से प्राप्त होते हैं।

२५—शवासन

इस आसन से सभी माँसपेशियों, नसों आदि को विश्राम मिलता है। यह आसन सब क्रियाओं के अन्त में करना चाहिए। यह समाप्ति का आसन है। इसका दूसरा नाम मृतासन है।

विधि

एक नरम कम्बल बिछा लें और पीठ के बल सीधे लेट जायें। हाथों को दोनों ओर भूमि पर रखें। टाँगों को पूर्णतया सीधा फैला दें। एड़ियों को आपस में मिला लें; पर अँगूठों को अलग-अलग रखें। नेत्र बन्द कर के धीरे-धीरे श्वास लें। सारी माँसपेशियाँ, अङ्गप्रत्यङ्ग, नसें आदि ढीली छोड़ दें। ढीला करने की प्रक्रिया पैर के अँगूठों से आरम्भ कर के पिण्डलियों की माँसपेशियों, पीठ की माँसपेशियों, सीना, भुजाएँ, हाथ गरदन, मुँह आदि तक लायें। आप अनुभव करेंगे कि पेट के अङ्ग, हृदय, छाती, मस्तिष्क भी शिथिल हो रहे हैं। नाड़ी-जाल को भी शिथिल कर दें। अब ॐ-ॐ-ॐ का मानसिक जप करें, आत्मा तथा राम का चिन्तन करें। शुद्ध भाव और पवित्र भावना से धीरे-धीरे ध्यान करें। सोयें मत। १५ मिनट तक ध्यान करते रहें। आपको पूर्ण शान्ति, सरलता, विश्राम और चैन की अनुभूति होगी। आप सभी को इसमें आनन्द की प्राप्ति होगी। शब्द अपूर्ण हैं। ये भावनाओं की अभिव्यक्ति नहीं कर सकते।

लाभ

शवासन में मुद्रा एवं ध्यान दोनों शामिल होते हैं। न केवल इससे शरीर को, अपितु मस्तिष्क एवं आत्मा को भी आराम मिलता है। इससे राहत, सुविधा एवं आराम प्राप्त होता है। शिथिलता लाना माँसपेशियों के व्यायाम में महत्त्वपूर्ण भाग है। यह तो आप भलीभाँति जानते हैं कि हलासन, सर्वाङ्गासन,

पश्चिमोत्तानासन, धनुरासन एवं अर्ध मत्स्येन्द्रासन में पीठ की समस्त माँसपेशियों (Lettissimus dorsi, psoasmagnus, Quadratus lumborum, Rectus, abdominis, Pectoralis major of the chest, Biceps, Triceps, The deltoid of the arm, Sartorius of the thighs.) का फैलाव एवं काफी सीमा तक विकास होता है। माँसपेशियों की तीव्र क्रिया में यह प्रक्रिया (मेटाबोलिज्म) बढ़ती है। यह प्रक्रिया एक प्रकार से सृजनात्मक (एनाबोलिक) एवं अपचयज (कैटबोलिक) परिवर्त्तन हैं जो शरीर में होते रहते हैं। सृजनात्मक परिवर्त्तन संरचनात्मक होते हैं तथा अपचयज परिवर्त्तन विनाशकारक होते हैं। इस प्रक्रिया (मेटाबोलिज्म) के दौरान सभी माँसपेशियों के ऊतकों (टिस्यूज़) को ताजा शुद्ध रक्त या कैपिलरी ओजिंग (Capillary oozing) के द्वारा प्लाज्मा पदार्थ प्राप्त होता है तथा कार्वनडाईआक्साइड दिल के दायें अलिन्द (Auricle) नसों से वापस आ जाता है। इसे ऊतक-श्वसन (Tissu respiration) कहते हैं। जिस प्रकार फेफड़ों में आक्सीजन एवं कार्वनडाईआक्साइड का आदान-प्रदान होता रहता है, ठीक उसी प्रकार ऊतकों में भी कार्वनडाईआक्साइड तथा आक्सीजन का आदान-प्रदान होता रहता है। आप इस शरीर के आभ्यान्तर यान्त्रिक कार्य की अद्‌भुत कार्य-प्रणाली पर विचार करें। यह मशीनरी कितनी आश्चर्यजनक है! क्या वैज्ञानिक शरीर के अणु, एक कोष या अङ्ग को बना सकता है? इस अद्‌भुत शरीर की रचना करने वाले विधाता को करबद्ध नमस्कार करें। ॐ ॐ के मन्त्र का उच्चारण करें। शान्त हो कर ध्यान करें। उसके प्रसाद से आपको इस सृष्टि का भेद ज्ञात हो जायेगा।

जिन माँसपेशियों पर अधिक जोर पड़ता है उन्हें शिथिल करने तथा आराम देने की आवश्यकता रहती है। शवासन से आपको पूर्णतया शिथिलता तथा आराम मिलेगा।

तृ ती य ख ण्ड

विविध आसन

२६—जानुशीर्षासन

विधि

बैठ जायें। बायीं एड़ी से कन्द-स्थान (Perineal space) को दबाते हुए दायीं टाँग को पूरी फैला दें। इसे बिलकुल सीधी रखें और पैर को दोनों हाथों से पकड़ लें। श्वास बाहर निकालिए, पेट को अन्दर ले जाइए। धीरे-धीरे शिर को झुकायें और माथे से दायाँ घुटना छुयें। इस मुद्रा को ५ से १० सेकण्ड तक रखें। धीरे-धीरे यह समय बढ़ाते जायें। निरन्तर अभ्यास से इस आसन को आप आधा घण्टे तक कर सकते हैं।

फिर शिर को पूर्व सामान्य स्थिति में ले आयें और कुछ मिनट विश्राम करें। पुनः यह आसन करें। ऐसे ५ या ६ बार यह आसन करें। क्रमानुसार पार्श्व बदलते रहें। अभ्यास करते समय गुदा की नसों को ऊपर की ओर रखें। यह अनुभव करें कि वीर्य-शक्ति मस्तिष्क की ओर प्रवाहित हो कर ओज-शक्ति में परिणत हो रही है। आप अपने मस्तिष्क की भावना-शक्ति का प्रयोग करें। जो इस आसन का अभ्यास करते हैं उनके लिए पश्चिमोत्तानासन करना सरल हो जायेगा।

एड़ी को कन्द (Perineum) पर ले जाने के बजाय आप इसे जङ्घा पर भी रख सकते हैं। यह आसन पहले वाले से कुछ अधिक कठिन है। इस आसन को शौच आदि से निवृत्त होने के बाद करना चाहिए।

लाभ

इस आसन से जठराग्नि की वृद्धि हो कर पाचन-शक्ति में योग मिलता है। इससे सूर्य-नाड़ी को शक्ति मिलती है, जो कि ब्रह्मचर्य का पालन करने में मदद करती है। समस्त गुर्दे-सम्बन्धी रोग दूर होते हैं। यह आसन आन्त्र-शूल में बहुत उपयोगी है। इससे कुण्डलिनी जाग्रत होती है तथा सुस्ती और दुर्बलता समाप्त हो जाती है। इस आसन को करने से आपको बहुत स्फूर्त्ति का अनुभव होगा। आपकी टाँगें शक्तिशाली हो जाती हैं। पश्चिमोत्तानासन में वर्णन किये गये सारे अन्य लाभ इस आक्षन से प्राप्त होते हैं।

२७—तुलांगुलासन

(तराजू आसन)

इस आसन में तराजू जैसी मुद्रा हो जाती है, इसलिए इसका नाम तुलांगुलासन है।

विधि

मत्स्यासन की भाँति पद्मासन में लेट जायें। हथेलियों को कूल्हों के नीचे रखें। यदि आपको हथेलियों को कूल्हों के नीचे रखना कठिन अनुभव होता हो, तो आप धीरे-धीरे झुक कर दोनों कोहनियों के सहारे स्थिर हो जायें। शिर और शरीर का ऊपरी भाग भूमि से ऊपर उठायें। अब पूरा शरीर कूल्हों तथा आगे वाली भुजाओं पर ठहर जायेगा। ठोड़ी को सीने पर दबायें। यह जालन्धर-बन्ध है, जो कि इस आसन में किया जा सकता है। जितनी देर आराम से श्वास को रोक सकते हों, रोकें। तत्पश्चात् श्वास को धीरे-धीरे छोड़ें। आप ५ से ३० मिनट तक यह कर सकते हैं।

लाभ

इस आसन से अफारा (Flatulence) दूर होता है। मेरुदण्ड बढ़ कर विकसित होता है। पेट के खिंचने के कारण मल मलाशय (Colon) से

गुदा की ओर धकेला जाता है। इस आसन से सीना पर्याप्त रूप से बढ़ता है, कुवड़ापन दूर हो जाता है तथा सीना चौड़ा और सुन्दर हो जाता है। इस आसन से आपको पद्मास के पूरे लाभ प्राप्त होते हैं। पेशियों और भुजाओं की नसें तथा आगे वाली बाँहों (भुजवल्ली) को अधिक रक्त की प्राप्ति होती है। अतएव वे शक्तिशाली हो जाती हैं।

२८—गर्भासन

इस आसन को करते समय गर्भ में बालक जैसी मुद्रा हो जाती है, इसलिए इसे गर्भासन कहते हैं।

विधि

नीचे कुक्कुटासन में वर्णन किये अनुसार, दोनों हाथों को जङ्घाओं तथा पिण्डलियों के बीच में हो कर निकालें। दोनों हाथों की कोहनियों को बाहर निकालें। दाहिने हाथ से दाहिना कान और बायें हाथ से बायाँ कान पकड़ लें। आपको इस आसन का अन्तिम चरण बड़ी सावधानी से करना चाहिए; क्योंकि आप, जब हाथों से कानों को पकड़ने की कोशिश करेंगे तो आपके पीछे की तरफ गिरने की सम्भावना रहती है। शरीर को रोकने के लिए आपके पास कोई सहारा नहीं होगा, आप असहाय हो जायेंगे; किन्तु अभ्यास से आप धीरे-धीरे कूल्हों पर शरीर का सन्तुलन रख सकते हैं। कुछ दिनों के अभ्यास के बाद आपका शरीर स्थिर हो जायेगा। यदि इस आसन को करने में आपको कठिनाई हो, तो आप पद्मासन के विना ही यह आसन कर सकते हैं। जङ्घाओं के पीछे से भुजाओं को निकाल कर कान अथवा गरदन पकड़ें। इस संशोधित मुद्रा से टाँगें नीचे की ओर फैलेंगी। इस आसन में २-३ मिनट तक रहें और इसे पाँच बार करें।

लाभ

इस आसन के करने से पाचन-शक्ति बढ़ती है, भूख बढ़ती है और आँतें पूर्णतया साफ हो जाती हैं। शौच साफ होता है। आँतों के अनेक रोग दूर हो जाते हैं। हाथ और टाँगें सुदृढ़ होते हैं।

२६--साष्टाङ्गासन

टाँगों को झुका कर पैरों के अँगूठों और घुटनों के बल खड़े हो जायें। हथेलियों को तलवों के पास रखें। पीठ को पूरी तरह मोड़ कर अपने शिर को भूमि की ओर झुकायें। हाथों को मत झुकायें, उन्हें सीधा रखें। यह आसन धनुरासन जैसा ही है। आप इसे धनुरासन या खड़ी मुद्रा में चक्रासन कह सकते हैं। इस मुद्रा में धनुरासन के सम्पूर्ण लाभ प्राप्त होते हैं।

३०--सिंहासन

दोनों एड़ियों को अण्डकोष (स्क्रोटम) के नीचे या गुदा और अण्डकोष (स्क्रोटम) के बीच में रखें। बायीं एड़ी को दायीं ओर और दायीं एड़ी को बायीं ओर रखें। हाथों को घुटनों पर रखें, अँगुलियों को खोल कर फैलायें। मुँह खोल लें। यह रोगनाशक है। योगी लोग इसका अभ्यास करते हैं। इस आसन से बन्धों का अभ्यास भली प्रकार किया जा सकता है।

३१--कुक्कुटासन

संस्कृत में कुक्कुट का अर्थ मुर्गा है। इस आसन के प्रदर्शन में मुर्गे जैसी मुद्रा होती है।

विधि

प्रथम पद्मासन लगायें। दोनों भुजाओं को एक-एक करके कोहनी के

जोड़ तक पिण्डलियों के बीच वाले स्थान में निकाल लें और हथेलियों को भूमि पर इस प्रकार रखें कि अँगुलियाँ सामने की ओर रहें। अव शरीर को भूमि से ऊपर उठायें जैसा कि चित्र में दिखाया गया है। पैरों का ताला, जहाँ तक हो सके, कोहनियों के जोड़ तक आना चाहिए। यदि आप पद्मासन को थोड़ा उठायें तो हाथों का वाहर निकालना सरल हो जाता है। स्थूल शरीर वाले साधकों को जङ्घा और पिण्डलियों के वीच में से हाथ निकालना कठिन होगा। जितनी देर तक इस आसन को कर सकें, करें।

लाभ

पद्मासन के पूरे लाभ इस आसन से सर्वाधिक मात्रा में प्राप्त होते हैं। आलस्य या सुस्ती दूर होती है। नाड़ियाँ शुद्ध होती हैं। हाथों की पेशिलता (Biceps), कन्धों के पुट्ठे (Deltoid), वृहद् लघु अंसपेशी (पेक्टोरैलिस) आदि का भलीभाँति विकास होता है। इस आसन से सीना चौड़ा तथा हाथ लम्बे होते हैं।

३२—गोरक्षासन

पैरों को ऊपर की ओर करके उन्हें जङ्घा और पिण्डलियों की पेशियों के बीच में छुपे हुए ढङ्ग से रखें। एड़ियों को हाथों से ढक लें। जालन्धर-वन्ध लगा कर दृष्टि को नासिका के अग्र भाग पर रखें। इस आसन से योगियों को सफलता मिलती है।

३३—कन्दपीडासन

विधि

यह आसन वड़ी जङ्घाओं ओर पिण्डलियों की कड़ी पेशी वालों के लिए कुछ कठिन है। पतले-दुवले लोग इसे सुन्दर ढङ्ग से कर सकते हैं। एड़ी और

पैरों की अँगुलियाँ जोड़ कर भूमि पर बैठ जायें अर्थात् पैरों के तलवे एक-दूसरे के सामने हों। धीरे-धीरे पैरों को मोड़ कर एड़ियों को कन्द-स्थान (Perineum) पर रखें तथा पैरों की अँगुलियों को पीछे की ओर गुदा पर रखें। अब शरीर केवल घुटनों पर और पैरों के पार्श्वों के सहारे ठहरेगा। हाथों को घुटनों पर रखें। सीधे बैठ जायें। इस आसन को करने की एक और विधि भी है। पैरों के तलुवों को पास में एक-दूसरे के विरुद्ध मिला कर भूमि पर बैठें। दोनों आमने-सामने होने चाहिए। दोनों हाथों से एक पैर की अँगुलियों को पकड़ कर पैर को धीरे-धीरे पेट पर लाने का प्रयत्न करें। इसी तरीके से दूसरा पैर भी पेट पर ले आयें। जब आप इस आसन को अलग-अलग पैरों से करने लगें, तब आप इसे एक साथ दोनों पैरों से करने का प्रयत्न करें। इस आसन को धीरे-धीरे तथा बहुत सावधानी से करें। यदि इसे आप शक्ति के साथ जल्दी-जल्दी करेंगे तो आपकी टाँगों, घुटनों एवं अँगुलियों आदि में दर्द हो जायेगा। आसन पूर्ण होने पर तलवे भिन्न दिशाओं में होंगे और पैर के पीछे वाला भाग एक-दूसरे के सामने होगा।

लाभ

सब प्रकार से घुटनों के रोग, टाँगों की गठिया, सायटिका और पैरों की अँगुलियों की गठिया को आराम होता है। पिण्डलियों और टाँगों की नसों में शक्ति-सञ्चार होता है। स्थूल शरीर वाले व्यक्तियों के लिए यह आसन करना कठिन प्रतीत होगा।

३४--सङ्कटासन

बायें पैर पर खड़े हो जायें। दायीं टाँग उठा कर उसे बायीं टाँग से लपेट लें। हाथों को घुटनों पर रखें। यह सङ्कटासन है। गरुड़ासन-मुद्रा को भी इसी नाम से पुकारते हैं।

३५--योगासन

दायें पैर को बायें घुटने पर और बायें पैर को दायें घुटने पर रखें। तलवे ऊपर की ओर रहें। हाथों को अपनी बगल में भूमि पर रखें। हथेलियों को ऊपर रखें। दृष्टि को नासिका के अग्रभाग पर केन्द्रित कर चिरकाल तक ध्यान लगायें।

३६--उत्कटासन

खड़ें हो जायें। पैरों को मिला कर रखें और हाथों को कूल्हों पर दोनों तरफ रखें। फिर शरीर को धीरे-धीरे नीचा करें। शरीर को नीचा करते समय आपको कुछ कठिनाई अनुभव होगी। प्रारम्भ में सहायता हेतु दो दरवाजों की दोनों साइडों को अपने कूल्हों की समानता में पकड़ सकते हैं और फिर उनके सहारे से शरीर को नीचे करें। आप कुरसी के दोनों पार्श्वों का भी सहारा ले सकते हैं। जो व्यक्ति प्राणायाम करते है वे इस आसन को बहुत आसानी से कर सकते हैं। इस आसन में अधिक बल की आवश्यकता नहीं है। व्यक्ति को शरीर का सन्तुलन रखना सीखना चाहिए। अति दुबला-पतला मनुष्य इस आसन को बड़ी सुन्दरता से कर सकता है। जब आप शरीर को नीचे करें तो हो सकता है आप सन्तुलन बिगाड़ दें जिसके फलस्वरूप आप पार्श्व में अथवा आगे-पीछे गिर सकते हैं; किन्तु कुछ दिनों के अभ्यास से आप मुद्रा को ठीक रखने लगेंगे। जब आप यह आसन पूर्ण रूप से करने लगेंगे तो आपकी टाँगों, पैरों की उँगलियों से घुटनों तक और कूल्हों से शिर तक शरीर का भाग भूमि से लम्ब-रूप रेखा में होगा और आपकी जङ्घाएँ भूमि से समानान्तर रेखा में होंगी। प्रारम्भ में जब आप इस आसन का अभ्यास करें तो आप कुरसी पर बैठ सकते हैं। शरीर को कुरसी से दो या तीन इञ्च ऊपर उठाइए और सन्तुलन रखने का प्रयत्न कीजिए। कुछ दिनों के पश्चात् आप अपने मित्र से कह कर कुरसी चुपचाप हटवा दें और सन्तुलन

रखने का प्रयत्न करें। पैरों की अँगुलियों के बल पर बैठें। शरीर का पूरा भार केवल अँगुलियों पर ही रहे। कूल्हे एड़ियों से स्पर्श करें। इस आसन के करने से कमर का दर्द (Lumbago) दूर होता है। कलाई और पैरों की अँगुलियाँ पुष्ट होंगी। यह फील पाँव (Elephantiasis) रोग के लिए बहुत उपयोगी है। आप शरीर को और भी अधिक झुका सकते हैं जैसे कि दूसरे प्रकार में दिखाया गया है। यह आसन वस्ति-क्रिया के लिए प्रयुक्त होता है।

३७—जेष्ठिकासन

यह शवासन की भाँति विश्राम करने का आसन है। इसे भी समस्त आसनों के अन्त में करना चाहिए। यह शवासन जैसा ही है। इस आसन में आपके शिर के दोनों ओर हाथ भूमि पर रखे जाते हैं जबकि शवासन में हाथ बगलों में रखे जाते हैं।

३८—अध्वासन

पेट तथा छाती के बल भूमि पर लेट जायें। इसमें आपके हाथ बगलों में तथा हथेलियाँ भूमि की ओर होंगी। शरीर को अच्छी तरह फैलायें। यह शवासन से विपरीत मुद्रा है; परन्तु इसके लाभ वही हैं। कुछ देर तक अपना दायाँ गाल भूमि पर रखें फिर कुछ देर तक बायाँ गाल भूमि पर रखें।

३९—ऊर्ध्वपादासन

यह 'उत्तान पादासान' का दूसरा नाम है। निर्देशों के लिए अन्यत्र देखें।

४०—उष्ट्रासन

(ऊँट की मुद्रा)

नीचे मुँह करके भूमि पर लेट जायें। टाँगों को मोड़ कर जङ्घाओं पर रखें और हाथों से पैरों के अँगूठे अथवा टखनों को पकड़ें। शिर को थोड़ा ऊपर

उठा सकते हैं। यह भी धनुरासन के समान है; किन्तु इस आसन में जङ्घाएँ भूमि पर रखी जाती हैं। धनुरासन और शलभासन के लाभ इस आसन से मिल सकते हैं।

४१—मकरासन

अश्वासन की भाँति मुँह नीचे करके भूमि पर लेट जायें। हाथों से शिर को पकड़ लें।

४२—भद्रासन

(सुशील मुद्रा)

आराम से बैठ जायें। शरीर को सीधा तना हुआ रखें। दोनों एड़ियों को मूलाधार की बगलों में अथवा गुदा पर दृढ़ता से दबायें। दृष्टि को नासिकाग्र भाग पर रखें। इस आसन से समस्त बीमारियाँ एवं विष-प्रभाव नष्ट हो जाते हैं।

४३—वृश्चिकासन

जो लोग शीर्षासन तथा हस्तवृक्षासन को काफी देर तक कर सकते हैं, वे इस आसन के लिए चेष्टा कर सकते हैं। इस आसन में आप हाथ और कोहनियों को भूमि पर रखें। प्रारम्भ में इस आसन का अभ्यास दीवार के सहारे करें। अब टाँगों को दीवार पर डाल दें और फिर पाँवों को दीवार से दो इञ्च दूर करके सन्तुलन बनाये रखने का प्रयत्न करें। कुछ दिन तक इस प्रकार से अभ्यास करें। जब आप सन्तुलन रखने लग जायें, तब शनैः शनैः टाँगों को घुटनों पर झुकायें और कूल्हों को पीठ की ओर कर पैरों के तलवे अथवा अँगुलियाँ अपने शरीर पर रख लें। शीर्ष, चक्र और धनुर आसनों के सारे लाभ आपको इस आसन से प्राप्त होंगे।

४४—योगनिद्रासन

शवासन की भाँति लेट जायें। स्थूलकाय व्यक्ति इस आसन को नहीं कर सकते; अतः उन्हें इसकी चेष्टा नहीं करनी चाहिए। टाँगें पकड़ कर पैरों को गरदन या शिर के नीचे जमा दें। फिर धीरे-धीरे नितम्बों को उठायें। हथेलियों को नितम्बों या कूल्हों के नीचे भूमि पर टेक दें।

४५—अर्ध-पादासन

भूमि पर बैठ कर दायीं एड़ी दायें नितम्ब के पास और बायाँ टखना बायें घुटने पर रखें। हाथों को नितम्बों से कुछ इञ्च की दूरी पर भूमि पर रखें। इसी प्रकार यह आसन दूसरी टाँग से भी करें।

४६—कोकिलासन

समासन अथवा सिद्धासन में बैठें। हाथों को भुजाओं की काँखों (Armpits) में दृढ़ता से रखें। अब कोहनियाँ एक सीध में हो जायेंगी। धीरे-धीरे कोहनियों को झुकायें और अपने सामने की भूमि पर टेकें। सम्पूर्ण शरीर का भार दोनों नितम्बों और कोहनियों पर रहेगा। यह आसन एक कम्बल पर करें अन्यथा कोहनियों को चोट पहुँचेगी।

४७—कर्णपीड़ासन

हाथों को पीछे की ओर भूमि पर रख कर हलासन करें। अब धीरे-धीरे घुटनों पर टाँगों को मोड़ें तथा घुटनों को कन्धों से स्पर्श करायें। इस आसन में घुटनों से ले कर अँगुलियों तक टाँगें भूमि के समानान्तर रहेंगी।

४८—वातायनासन

सीधे खड़े हो जायें। दायाँ पैर पकड़ लें। एड़ी को दृढ़ता से जङ्घा के मूल (Root) में अथवा जननेन्द्रिय के मूल पर रख कर एक टाँग पर खड़े हो जायें। धीरे-धीरे बायीं टाँग झुका कर दायें घुटने से भूमि को स्पर्श करें। यह वातायनासन है।

४९—पर्यङ्कासन

साधारणतया इसे सुप्त-वज्रासन के नाम से भी पुकारा जाता है। सुप्त-वज्रासन का वर्णन अन्यत्र किया गया है।

५०—मृतासन

यह शवासन का दूसरा नाम है। इसके लिए निर्देश अन्यत्र देखें।

आवश्यक निर्देश

(१) आसनों का अभ्यास एक अच्छे सुसंवातित, स्वच्छ कमरे में करना चाहिए जहाँ शुद्ध वायु की निर्वाध गति हो। कमरे का फर्श समतल हो। नदियों के रेतीले पृष्ठतल पर, खुले हुए हवादार स्थानों पर तथा समुद्री तटों पर भी आसनों का अभ्यास किया जा सकता है। यदि आप कमरे में आसन का अभ्यास करते हैं तो ध्यान रखें कि कमरा इतना भरा हुआ नहीं हो कि जिससे आप स्वच्छन्द रूप से हाथ-पैर और शरीर को न हिला-डुला सकें।

(२) आसन प्रातः खाली पेट अथवा भोजन करने के कम-से-कम तीन घण्टे बाद करना चाहिए। प्रातःकाल आसनों के लिए सर्वाधिक उपयुक्त समय है।

(३) प्रातः चार बजे सो कर उठने ही जप और ध्यान आरम्भ करना सदैव अच्छा होता है। इस समय मन पूर्णतया शान्त एवं स्फूर्त रहता है। इस समय आप बड़ी सरलता से ध्यानशील चित्त-वृत्ति को अपना सकते हैं। ध्यान अधिक महत्त्वपूर्ण है। प्रातःकाल बिस्तर से उठने पर मन स्वच्छ स्लेट की भाँति होता है, वह सांसारिक विचारों से मुक्त रहता है; अतः इस समय बिना किसी प्रयत्न अथवा सङ्घर्ष के ही मन ध्यान-स्थिति में प्रवेश कर सकता है।

(४) अधिकांश लोग प्रातःकाल के अपने अमूल्य समय को वैसे ही नष्ट कर देते हैं। ये लोग आधा घण्टा मल-त्याग में तथा आधा घण्टा दन्त-धावन में लगा देते हैं; अतः उनके ध्यान के बैठने के पूर्व ही सूर्य निकल आता है। यह बुरी आदत है। साधकों को

पाँच मिनट में मलोत्सर्ग से निवृत्त हो जाना चाहिए। दूसरे पाँच मिनट में अपने दाँत साफ कर लेने चाहिए। यदि आपको कब्ज की शिकायत हो तो बिस्तर से उठने के बाद तत्काल ही पाँच मिनट तक शलभासन, भुजङ्गासन और धनुरासन का अभ्यास करें। यदि आप शौच-शुद्धि दिन में विलम्ब से करने के अभ्यस्त हैं तो आप शौचादि कर्म आसन, प्राणायाम, जप और ध्यान के बाद कर सकते हैं।

(५) प्रातः चार बजे उठें। मल-मूत्र त्याग करें। अपना मुँह धोयें। इसके बाद अपने आसन, प्राणायाम तथा ध्यान का अभ्यास करें। यह क्रम लाभदायक है। यदि आप प्रातः ४ बजे से ६ बजे के बीच ध्यान करने के लिए विशेष रूप से उत्सुक हों तो आप १० से १५ मिनट तक शीर्षासन करके ध्यान के लिए बैठ सकते हैं। ध्यान की समाप्ति पर आप अन्य आसन कर सकते हैं। यदि आप प्रातः जल्दी शौचादि से निवृत्त होने के अभ्यस्त नहीं हैं तो आप शौचादि से निवृत्त होने के पूर्व भी आसनों का अभ्यास कर सकते हैं। आसन और ध्यान के बाद आप शौच आदि के लिए जा सकते हैं। उस समय शौच भी साफ होगा।

(६) जिन्हें कब्ज का पुराना रोग हो, वे गणेश-क्रिया कर सकते हैं। साबुन या तेल से चिकनी की गयी मध्यमा अँगुली डाल कर गुदा से मल निकालने की क्रिया गणेश-क्रिया कहलाती है। कभी-कभी भरे पेट को रिक्त करने के लिए एनीमा (Douching) भी लाभप्रद होता है।

(७) भूमि पर एक कम्बल बिछा दें और उस पर आसनों का अभ्यास करें। शीर्षासन तथा उसके विभिन्न प्रकारों का अभ्यास करने के लिए तकिया या चौहरा कम्बल उपयोग में लायें।

(८) आसन करते समय लंगोटी, कौपीन या रोकने वाली पट्टी (Sus-

pendary Bandage) प्रयोग में लायें। आप शरीर पर बनियाइन धारण कर सकते हैं।

(९) आसन करते समय चश्मे (उपनेत्र) का उपयोग मत करें। चश्मा पहने रहने पर उसके टूटने तथा उससे आँख में चोट लगने की आशङ्का रहती है।

(१०) जो साधक अधिक समय तक शीर्षासन आदि का अभ्यास करते हैं, उन्हें आसन की समाप्ति पर हलका भोजन लेना अथवा एक प्याला दूध पीना चाहिए।

(११) यदि आप अकेले शीर्षासन करने में ही आधा घण्टा या अधिक समय लगा देते हों तो अन्य आसनों का समय कम कर दें।

(१२) आपको नियमित रूप से अभ्यास करना चाहिए। मनमौजी ढङ्ग से आसन करने वाले व्यक्तियों को कोई लाभ नहीं होता है।

"मिताहारं विना यस्तु योगारम्भं तु कारयेत्।
महारोगो भवेत्तस्य किञ्चिद् योगो न सिध्यति॥"
(घेरण्डसंहिता : ५-१६)

—जो मिताहार न करके योगारम्भ करता है, उसको कुछ भी योग सिद्ध नहीं होता है और उसमें नाना रोग उत्पन्न होते हैं।

(१३) आसनों का अभ्यास आरम्भ करने से पूर्व, रात्रि को सोते समय एक या दो ग्राम वर्म सैन्टो नाईन पाउडर (Worm Powder Santonin) की खुराक ले लें। दूसरे दिन प्रातः उठ कर दो औंस अरण्डी का तेल (Castor Oil) लें। तेल को पिपरमिन्ट के पानी, चाय या काली मिर्च के पानी में मिला कर पीयें। यदि आपको

पसन्द हो तो केवल तेल ही पी सकते हैं। योगाभ्यास करने से पूर्व आँतों का भली प्रकार साफ होना आवश्यक है।

(१४) प्रारम्भ में आसन कम-से-कम समय तक करें फिर धीरे-धीरे समय को बढ़ायें। जितनी देर तक आसन-मुद्रा को सुविधापूर्वक स्थिर रख सकते हों, उतनी देर तक आसन करें।

(१५) आसन अष्टाङ्गयोग का तृतीय अङ्ग है। आसन में भली प्रकार स्थिर होने के पश्चात् ही आप प्राणायाम से लाभान्वित हो सकते हैं।

(१६) आसन और प्राणायाम के अभ्यास के साथ यदि जप भी किया जाय तो इससे अधिकतम लाभ होता है।

(१७) यदि भवन की नींव पक्की नहीं डाली गयी तो ऊपर की बनायी हुई इमारत शीघ्र ही गिर जायेगी। इसी प्रकार यदि योग के साधक ने आसन पर विजय प्राप्त नहीं की तो वह योगाभ्यास के अपने उच्चतर मार्ग में सफलतापूर्वक आगे नहीं बढ़ सकता।

(१८) आसनों से अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए नियमित रूप से अभ्यास करना अत्यावश्यक है। साधारणतया लोग प्रारम्भ में दो महीने तक तो रुचि और समुत्साह से आसनों का अभ्यास करते हैं फिर अभ्यास करना छोड़ देते हैं। यह बड़ी भारी भूल है। वे चाहते हैं कि एक यौगिक शिक्षक सदा उनके पास रहे। उनमें स्त्रीसुलभ पराश्रित रहने की मनोवृत्ति होती है। वे आलसी, निष्क्रिय एवं सुस्त होते हैं।

(१९) आजकल मैदान में खेले जाने वाले खेल बड़े महँगे हो गये हैं। जाल (Nets), रैकट (Rackets), गेंद (Balls), पम्प (Inflators) बार-बार खरीदने पड़ते हैं। आसनों के अभ्यास के लिए कुछ भी व्यय नहीं करना पड़ता।

(२०) शारीरिक व्यायाम प्राण को बाहर खींचते हैं। आसन प्राण को भीतर खींचते हैं और उसका शरीर और विभिन्न संस्थानों में सम विभाजन कर देते हैं। आसन न केवल शारीरिक अपितु आध्यात्मिक उत्थान भी करते हैं; क्योंकि इनसे मूलाधार-चक्र में सोयी हुई कुण्डलिनी-शक्ति (Serpent Power) जाग्रत होती है। यह पतञ्जलि महर्षि के अष्टाङ्ग राजयोग का तृतीय अङ्ग है। विशेष प्रकार के आसन के अभ्यास से विशेष रोग का निवारण होता है।

(२१) आसन केवल शारीरिक व्यायाम मात्र ही नहीं हैं—बल्कि इनमें कुछ और विशेषता भी है। इनका आध्यात्मिक आधार है। इन्द्रियाँ, मन और शरीर को नियन्त्रित करने में इनसे अत्यधिक योग मिलता है। इनसे शरीर-शुद्धि और नाड़ी-शुद्धि होती है तथा कुण्डलिनी जाग्रत होती है जो साधक को आनन्द, शक्ति और योग-समाधि प्रदान करती है। यदि आप दण्ड-बैठक (केवल शारीरिक व्यायाम) प्रतिदिन ५०० बार अथवा समानान्तर छड़ों (पैरेलल बार्स) (Parallel Bars) पर चलने का व्यायाम ५० बार प्रतिदिन करके पाँच वर्षों तक अभ्यास करें तब भी इससे यह रहस्यमयी शक्ति, कुण्डलिनी को जाग्रत नहीं कर सकेंगे। क्या अब आपने साधारण शारीरिक व्यायाम और आसनों के व्यायाम के अन्तर को जान लिया ?

(२२) स्त्रियों को भी आसनों का अभ्यास करना चाहिए। इससे उनसे स्वस्थ तथा बलवान् सन्तान उत्पन्न होगी। यदि माताएँ स्वस्थ एवं बलवती होंगी तो निश्चय ही उनके बच्चे भी स्वस्थ और बलवान् होंगे। नवयुवतियों के पुनरुत्थान का तात्पर्य है अखिल विश्व का पुनरुत्थान। यदि स्त्रियाँ रुचि एवं ध्यान के साथ नियमपूर्वक आसनों का अभ्यास करें तो इसमें सन्देह नहीं कि उनके स्वास्थ्य एवं जीवनशक्ति में अद्भुत वृद्धि होगी। आशा है कि वे मेरी हार्दिक प्रार्थना को धैर्य-

पूर्वक सुन कर इन यौगिक पाठों को पढ़ते ही यौगिक आसनों का अभ्यास आरम्भ कर देंगी। ये नव-महिला शिक्षार्थी धन्य हैं जो योग के मार्ग पर चलती हैं। योगिनी महिलाओं से उत्पन्न हुई सन्तान भी योगी होगी।

(२३) योगासनों के साथ-साथ जप और प्राणायाम भी चलने चाहिए। तभी जा कर यह यथार्थ योग होता है।

(२४) प्रारम्भ में आप कुछ आसनों को पूर्ण रूप से नहीं कर पायेंगे। नियमित अभ्यास से पूर्णता आ जायेगी। इसके लिए धैर्य और अध्यवसाय, सच्चाई और तत्परता की आवश्यकता है।

(२५) शीर्ष, सर्वाङ्ग, पश्चिमोत्तान, धनुर और मयूर आसनों का अच्छा समन्वय होता है। शीर्ष, सर्वाङ्ग और पश्चिमोत्तान त्रयासन (Trinity Asanas) हैं। यदि आपके पास समय नहीं हो तो आप आसनों की संख्या को कम कर सकते हैं। यह आसन-त्रय करने से ही आपको अन्य सारे आसनों के गुण तथा लाभ प्राप्त हो जायेंगे।

(२६) जप तथा ध्यान के लिए चार आसन निर्धारित हैं। ये हैं पद्म, सिद्ध, स्वस्तिक और सुखासन। अधिकांश लोगों के लिए पद्मासन सर्वश्रेष्ठ है। जो ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहते हैं, उन्हें सिद्धासन का अभ्यास करना चाहिए।

(२७) आसनों को कभी मत बदलें। एक कुलक बना लें और उसका दृढ़ता के साथ अभ्यास करें। यदि आप एक आसन-कुलक को आज और दूसरे को कल करते हैं, तो इस प्रकार के आसनों के करने से आपको विशेष लाभ नहीं होगा।

(२८) आप आसनों में जितना स्थिर रहेंगे, उतना ही अधिक आप मन

को एकाग्र कर सकेंगे। आप स्थिर आसन के विना ध्यान भली प्रकार नहीं कर सकते ।

(२९) सम्पूर्ण अभ्यास-काल में आपको अपनी सहज बुद्धि का सदैव उपयोग करना चाहिए । यदि आपको एक प्रकार का भोजन अनुकूल न पड़े तो भली प्रकार विचार कर अथवा अपने गुरु से परामर्श करके उसे बदल दें । यदि कोई विशेष आसन अनुकूल न पड़े, तो अन्य आसन चुन लेना चाहिए । इसे युक्ति कहते हैं । जहाँ युक्ति है, वहाँ सिद्धि, भुक्ति और मुक्ति हैं ।

(३०) यदि आप किसी विशेष आसन को पूर्ण सन्तोषप्रद ढङ्ग से न कर सकें, तो निराश मत हों । जहाँ चाह है, वहाँ राह है । हथेली पर दही नहीं जमता है । ब्रूस और मकड़ी की कहानी याद रखें और पुनः पुनः अभ्यास करें । निरन्तर अभ्यास से सब-कुछ ठीक हो जायेगा ।

(३१) कुण्डलिनी जाग्रत हुए बिना समाधि अथवा परम चेतनावस्था की स्थिति सम्भव नहीं है । कुण्डलिनी कई प्रकार से जाग्रत की जा सकती है; उदाहरणार्थ आसन, मुद्रा, बन्ध, प्राणायाम, भक्ति, गुरु-कृपा, जप, शक्तिशाली विश्लेषणात्मक सङ्कल्प-शक्ति तथा विचार-शक्ति । जो लोग कुण्डलिनी जाग्रत करने की चेष्टा करें, उनमें मन, वाणी और कर्म की पूर्ण शुद्धि होनी चाहिए । उनको मानसिक और शारीरिक ब्रह्मचर्य रखना चाहिए । तभी वे समाधि के लाभ प्राप्त कर सकते हैं । कुण्डलिनी जाग्रत होने पर पुराने संस्कार नष्ट हो जाते हैं और अज्ञानता-रूपी हृदय-ग्रन्थि छिन्न-भिन्न हो जाती है । आप संसार-चक्र (जन्म-मरण) से मुक्त हो कर अमर सच्चिदानन्द-स्थिति को प्राप्त कर लेंगे ।

(३२) आसनों के अभ्यास में लघु कुम्भक (श्वास को रोकना) से आसनों की प्रभावोत्पादकता में वृद्धि होती है तथा योगाभ्यास करने वाले व्यक्ति को अधिक शक्ति एवं क्षमता प्राप्त होती है।

(३३) जप करने वाले आसन-अभ्यास-काल में अपना मन्त्र-जप कर सकते हैं। जब आप छः माह तक मन्त्रोच्चारण करते रहेंगे तो आपकी एक आदत बन जायेगी और संस्कारों के प्रभाव से आप स्वतः ही आसन करते समय निर्बाध रूप से जप करते रहेंगे। इसमें कोई कठिनाई नहीं होगी। व्यापारीगण, जिनको बहुत कम समय मिलता है, आसनों के मध्य जप कर सकते हैं। यह कुछ ऐसा है जैसा कि एक पत्थर फेंकने से चार फल मिल जाना। इससे आपको कई सिद्धियाँ प्राप्त होंगी।

(३४) जो लोग शीर्षासन और उसके विभिन्न प्रकारों का अभ्यास करते हैं, उन्हें आसन समाप्त करने के बाद, हलका नाश्ता, एक प्याला दूध या फलों का रस पी लेना चाहिए। पर्याप्त देर तक अभ्यास करने वालों के लिए नाश्ता परम आवश्यक है। उन्हें दृढ़ता के साथ ब्रह्म-चर्यव्रत का पालन करना चाहिए।

(३५) प्रत्येक साधक को अपनी, प्रकृति, क्षमता, सुविधा, अवकाश तथा आवश्यकतानुसार कुछ आसनों को अभ्यास हेतु चुन लेना चाहिए।

(३६) यह उचित है कि योग के साधक मल-त्याग के पश्चात् समस्त आसन करें। यदि आपको अपराह्न अथवा सायङ्काल में ही शौच-शुद्धि की आदत हो, तो किसी प्रकार इस आदत को बदल देना चाहिए। प्रतिदिन प्रातःकाल बिस्तर से उठते ही एक बार शौच साफ होना चाहिए। प्रातः ४ बजे नियम से थोड़े समय के लिए एक बार शौचालय में जा कर बैठें। हो सकता है कुछ दिन तक आप उस समय

मल-त्याग न कर सकें; किन्तु कुछ समय बाद आपको नियमित रूप से शौच साफ होने लगेगा और आपकी एक आदत बन जायगी। योगीजन तुरन्त किसी भी पुरानी आदत को छोड़ कर नयी आदत बना सकते हैं। रात्रि को सोते समय और प्रातः उठते ही ठण्डा अथवा साधारण गरम पानी पीयें। भोजन भी नियमित तथा व्यवस्थित करें। प्रातः उठते ही आप पहले ध्यान करें; फिर आसन कर सकते हैं।

(३७) यदि आप अपने भोजन, आसन और ध्यान के विषय में सावधान रहें तो थोड़े समय में ही आपके नेत्र सुन्दर तथा चमकीले होंगे और वर्ण सुन्दर हो जायगा तथा चित्त में शान्ति की प्राप्ति होगी। हठयोग साधकों को सौन्दर्य, स्वास्थ्य, शक्ति, चिरायु आदि गुणों की प्राप्ति कराता है।

(३८) अनावश्यक चिन्ताओं से बचते रहना चाहिए। परेशान नहीं होना चाहिए। चिन्तित नहीं होना चाहिए। सुस्त मत बनें तथा अपना समय नष्ट मत करें। यदि आपकी उन्नति में देर लगे, तो अपने को परेशान मत करें, शान्ति से प्रतीक्षा करें। यदि आपमें हार्दिक भावना है, तो निश्चय ही आपको सफलता मिलेगी।

(३९) अपनी साधना में एक दिन भी न चूकें।

(४०) शरीर को अनावश्यक मत हिलायें। शरीर को बार-बार हिलाने से मन भी विक्षुब्ध हो जाता है। शरीर को समय-समय पर मत खुजलायें। आसन चट्टान की भाँति दृढ़ होना चाहिए।

(४१) श्वास धीरे-धीरे लें। आसन बार-बार मत बदलें। प्रतिदिन एक समय में एक ही स्थान पर बैठें। अपने गुरु द्वारा बताये अनुसार उपयुक्त मनोवृत्ति बनायें।

(४२) सांसारिक वासना, जिसका कि निर्माण सैकड़ों जीवनों के अभ्यास से हुआ है, कभी नष्ट नहीं होती। इसका विनाश केवल चिरकाल तक योगाभ्यास करने से ही हो सकता है।

(४३) सिद्धियों की कभी परवाह मत करें। उनसे निष्ठुरतापूर्वक दूर रहें। उनसे आपका पतन होगा।

(४४) यम और नियम योग की नींव हैं। इनमें पूर्ण रूप से स्थिर हो जाने पर समाधि स्वतः लग जायेगी।

(४५) मन के साथ उदारता नहीं बरतनी चाहिए। यदि आज आप मन को एक विलास-वस्तु देंगे, तो वह कल दो की माँग करेगा। इस प्रकार प्रतिदिन विलास-वस्तु की सामग्री बढ़ती जायेगी। मन की दशा अधिक लाड़-प्यार में बिगड़े हुए बच्चे के समान हो जायेगी। कहावत भी है, 'दण्ड से बचाना बच्चे को बिगाड़ना है।' यही बात मन पर भी लागू होती है। मन बच्चे से भी अधिक बुरा है। आपको प्रत्येक गम्भीर भूल के लिए मन को व्रत (उपवास) आदि के द्वारा दण्डित करना होगा। महात्मा गान्धी ऐसा ही करते थे; अतः वे शुद्ध हो गये। उन्होंने अपनी इच्छा-शक्ति को शुद्ध, बलवान् और अप्रतिरोध्य बना लिया था। अपने अङ्गों को उनके उपयुक्त स्थानों पर रखें। इन्हें इञ्चभर भी मत हिलने दें। अभ्यास से चित्त को एकाग्र बनायें।

(४६) यदि आप अपने दोषों पर सावधानी से दृष्टि रखें, तथा यदि आप-में हार्दिक भाव हैं और यदि आप सङ्घर्ष करें, तो ये दोष कभी-न-कभी नष्ट हो जायेंगे। मलिनताओं को एक-एक करके, थोड़ा-थोड़ा करके पूर्णतया नष्ट कर दें।

(४७) मुँह के द्वारा जल पी कर पेट और छोटी आँतों में ले जायें और फिर इसे तुरन्त एनीमे की भाँति मल-द्वार से बाहर निकाल दें।

हठयोग में इसे साङ्गोपचार-क्रिया कहते हैं। मल-द्वार के द्वारा सिगरेट का धुआँ तक बाहर निकाला जा सकता है। किष्किन्धा के ब्रह्मचारी शम्भूनाथ जी इसे करते थे। वाराणसी के योगी त्रिलिङ्ग स्वामी साङ्गोपचार-क्रिया में अति-दक्ष थे। साङ्गोपचार में नौलि और बस्ति क्रियाओं की सहायता अपेक्षित है। हार्दिक भावना से अभ्यास करने वालों के लिए योग-मार्ग में कठिनाई बिलकुल नहीं होती।

(४८) मुँह या नासिका द्वारा एक पानी लीटर पी लें और उसे २० सेकण्ड तक रोके रखें। फिर धीरे-धीरे बाहर निकाल दें। यह कुञ्जर-क्रिया या कुञ्जर-योग कहलाता है। यह आमाशय को साफ करने की प्रक्रिया है। यह पेट के लिए जुलाब का काम करती है। पेट में जितनी विकृत सामग्री सड़ रही होगी, निकल जायेगी। आपको फिर पेट का कोई रोग नहीं होगा। इसे कभी-कभी करें। इसे आदत मत बनायें। यह एक हठयोग-क्रिया है।

(४९) लोग निःस्वार्थ सेवा द्वारा मल तथा उपासना द्वारा विक्षेप को दूर नहीं करना चाहते। वे तुरन्त कुण्डलिनी को जाग्रत करने तथा ब्रह्माकार-वृत्ति को विकसित करने को कूद पड़ते हैं। इससे वे अपनी टाँगें तोड़ बैठते हैं। सेवा और उपासना करें, पुरुषार्थ करें; फिर ज्ञान या मोक्ष स्वतः ही प्राप्त हो जायेगा, कुण्डलिनी स्वयं जाग्रत हो जायेगी।

(५०) व्यक्ति एक साथ १३ घण्टे बिना हिले-डुले एक आसन में बैठ सकता है, फिर भी उसमें इच्छाएँ बनी रह सकती हैं। यह सरकस या नट की भाँति एक शारीरिक व्यायाम है। कोई मनुष्य बिना नेत्र बन्द किये, बिना पुतली फेरे, बिना पलक झपकाये तीन घण्टे तक त्राटक कर लेता है

फिर भी वह इच्छाओं एवं अहंभाव से पूर्ण रहता है। यह भी एक दूसरे प्रकार का शारीरिक व्यायाम है। इसका आध्यात्मिकता से कोई सम्बन्ध नहीं है। इस प्रकार का अभ्यास करने वालों को जो देखते हैं वे धोखे में आ जाते हैं। चालीस दिन तक उपवास करना भी भौतिक शरीर का एक अन्य प्रकार का प्रशिक्षण है।

(५१) युवावस्था में ही आध्यात्मिकता का वीज बोयें। अपने वीर्य को नष्ट मत करें। इन्द्रिय और मन को अनुशासित करें। साधना करें। चित्त एकाग्र करें, अपने-आपको शुद्ध करें, ध्यान करें, सेवा करें, प्रेम करें, सवके साथ करुणा-भाव रखें और आत्मसाक्षात्कार करें। जव आप वृद्ध हो जायेंगे तव आप चिन्ता और मृत्यु के भय से मुक्त हो जायेंगे। वृद्धावस्था में किसी तरह की कठोर साधना करना बड़ा कठिन है; अतएव किशोरावस्था में ही सचेत हो जायें।

(५२) सांसारिक मामलों के विषय में अधिक सोच-विचार मत करें। कर्त्तव्य-पालन के लिए जितना आवश्यक है उतना ही सोचें। अपना कर्त्तव्य करें और शेष ईश्वर पर छोड़ दें।

(५३) थोड़े ही समय में आप विशेष प्रकार की साधना से विशिष्ट लाभ प्राप्त होता अनुभव करेंगे।

(५४) जप और ध्यान प्रारम्भ करने से पूर्व आसनों का अभ्यास अति-सुन्दर और प्रवाहक शक्ति वाला होता है। इससे शरीर एवं मन का आलस्य और तन्द्रापन दूर होता है। यह मंन को स्थिर कर, उसमें नयी शक्ति और शान्ति पैदा करता है।

(५५) केवल नौलि और उड्डीयान आपको मोक्ष नहीं दे सकते। ये केवल

स्वास्थ्य को सुन्दर रखने के साधन मात्र हैं। इन्हें ही अपना परम लक्ष्य मत समझ बैठें। जीवन का परमार्थ आत्मसाक्षात्कार है। चित्त को शुद्ध करें, धारणा और ध्यान करें।

(५६) आपके अन्दर ज्ञान के लिए, योगी अथवा ज्ञानी होने से लिए समस्त उपादान हैं। अभ्यास करें, आत्म-विकास करें, अपना अधिकार बतायें और आत्म-साक्षात्कार करें।

(५७) यदि कोई व्यक्ति जीवन में उन्नति करना चाहता है, तो उसे जूआ, मद्यपान, अत्यधिक निद्रा, आलस्य, भय, क्रोध, अकर्मण्यता और दीर्घसूत्रता छोड़ देने चाहिए।

(५८) जब आपका आध्यात्मिक अभ्यास बहुत बढ़ जाये, तो आपको २४ घण्टे के लिए लगातार कठोरता से मौन-व्रत का पालन करना चाहिए। यह कुछ महीनों तक चालू रहना चाहिए।

(५९) खान, पान, निद्रा और अन्य सभी बातों में संयम करें। मध्यम मार्ग अपनाना सदैव अच्छा एवं सुरक्षित रहता है। स्वर्णिम मध्यम मार्ग का पालन करें, तब आप शीघ्र ही योगी बन सकेंगे।

(६०) सदाचार, सद्विचार और सत्सङ्ग योगाभ्यास-काल में आवश्यक हैं।

(६१) सभी प्रकार के अम्ल, तीव्र और तीक्ष्ण भोजन छोड़ने दूध औ· रस पीने में आनन्द लेने, ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करने, भोजन में मिताचार बरतने और योग में सदा प्रवृत्त रहने से योगी वर्षभर से कुछ ही अधिक-समय में सिद्ध हो जाता है।

(६२) आसन और प्राणायाम के अभ्यास-काल में सात्त्विक भोजन करना आवश्यक है। दूध, घी, मीठा दही, फल, बादाम, मलाई आदि का सेवन करें। लहसुन, प्याज, माँस, मछली, धूमपान मादक पेय,

खट्टी और चरपरी चीजें छोड़ दें। अत्यधिक नहीं खाना चाहिए। मिताहारी बनें। भोजन नियमित और समयानुसार करने का अभ्यास करें। योगी के लिए हर समय हर प्रकार की चीजें खाना अत्यधिक हानिकर है।

(६३) आपको अपने भोजन के लिए कुछ चुनी हुई वस्तुओं, जैसे दाल, घी, गेहूँ का आटा, आलू या दूध तथा फलों का ही सेवन करना चाहिए।

(६४) भोजन में नियम रखना चाहिए। जिह्वा पर नियन्त्रण का अर्थ है मन पर नियन्त्रण रखना। आपको अपनी जिह्वा को अनियन्त्रित नहीं होने देना चाहिए।

(६५) ब्रह्मचर्य-पालन अत्यावश्यक है। आपका भोजन सात्त्विक होना चाहिए। आपको मिर्च, इमली, गर्म कढ़ी, चटनी आदि से बचना चाहिए।

(६६) ब्रह्मचर्य अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। कुविचार जार कर्म का आरम्भ है। मन में काम का विचार तक नहीं आना चाहिए। यम, नियम विवेक और वैराग्य के बिना आप योग-मार्ग में कुछ भी नहीं कर, सकते। आप आस्था, विश्वास, रुचि और ध्यान को कायम रखें। निःसन्देह आपको सफलता लिलेगी।

(६७) कामिनी-कञ्चन से छुटकारा पाये बिना तथा मानसिक ब्रह्मचर्य, सत्य और अहिंसा में स्थिर हुए बिना आप कभी भी भगवत्प्राप्ति नहीं कर सकते।

(६८) एक धार्मिक पति और सांसारिक वृत्ति वाली पत्नी सदा परस्पर विपरीत दिशाओं में चलते हैं। वे सुखी परिवार का आनन्द नहीं ले

सकते। इसमें यदि पति ऊपर चढ़ता है तो पत्नी उसे नीचे गिरा देती है। उनमें एक प्रकार से सदा रस्साकशी-सी चलती रहेगी। इससे योग के मार्ग में प्रगति के लिए कोई सम्भावना नहीं होगी।

(६९) जो पुत्र, पत्नी, भूमि और धन में आसक्त है, वह कणभर भी लाभ नहीं उठा सकता। वह व्यर्थ में ही अपना अमूल्य जीवन और शक्ति नष्ट कर रहा है। जो अनन्त साधना में रत हैं, वे ईश-मानव हैं।

(७०) मनुष्य सोचता है कि पत्नी के बिना वह अपूर्ण है। विवाह के बाद वह फिर सोचने लगता है कि जब तक एक पुत्र तथा एक पुत्री न होए, वह अपूर्ण ही है। चाहे भौतिक रूप से मनुष्य को कितनी ही उपलब्धियाँ क्यों न हो जायें, उसे सदा कुछ-न-कुछ अभाव तथा असन्तोष का अनुभव होता रहेगा। यह सामान्य अनुभव है।

(७१) अतएव हम ऐसी वस्तु प्राप्त करने का प्रयत्न क्यों न करें, जो अधिक सन्तोष प्रदान करने वाली और सतत रहने वाली हो? या फिर शारीरिक प्रकृति की माँगों को पूरा करते हुए दासता और बन्धन के जीवन यापन से सन्तुष्ट होते रहें! सामान्य बुद्धि वाले प्रत्येक मनुष्य के हृदय में अन्ततोगत्वा यह प्रश्न अवश्य उठेगा। प्रत्येक को इस प्रश्न का उत्तर देना चाहिए। समस्त धर्मों का यह प्रारम्भिक बिन्दु है।

(७२) यदि आपमें वैराग्य की भावना प्रबल हो जाये, यदि आप अपनी इन्द्रियों, इन्द्रिय-सुखों और संसार के विषय-भोगों को विष्ठा तथा विष समझ कर दबा दें (क्योंकि उनमें कष्ट, पाप, भय, इच्छा, दुःख, रोग, बुढ़ापा और मृत्यु मिश्रित हैं); तो आपको इस

दुनिया में कोई वस्तु आकर्षित नहीं कर सकती । तब आपको शाश्वत शान्ति और अनन्त सुख प्राप्त होंगे । आपको स्त्री और संसार के अन्य पदार्थों में कोई आकर्षण नहीं रहेगा । काम-वासना आपको छू नहीं सकती ।

(७३) काम-वासना इस पृथ्वी पर सबसे बड़ा शत्रु है । यह मनुष्य का भक्षण कर जाती है । सम्भोग के पश्चात् भारी अशान्ति अनुभव होती है । अपनी पत्नी को खुश करने और उसकी आवश्यकताओं एवं विलास-वस्तुओं की पूर्त्ति हेतु धनोपार्जन के लिए आपको बहुत परिश्रम करना पड़ता है । धनोपार्जन करने में आप कई प्रकार के पाप करते हैं । आपको उसके दुःख, सन्ताप और चिन्ताओं में भागीदार बनना पड़ता है । वीर्य का अधिक पतन होने से आपको अनेक प्रकार के रोग हो जायेंगे । आपको अशान्ति, दुर्बलता और शक्ति का ह्रास अनुभव होने लगेगा और शीघ्र ही आप मृत्यु के मुख में चले जायेंगे, दीर्घायु को आप देख ही नहीं पायेंगे; इसलिए आप अखण्ड ब्रह्मचारी बनें ।

(७४) यदि ब्रह्मचर्य पालन करने के लिए एक प्रकार की साधना सहायक न हो तो आप विभिन्न साधनाओं की सम्मिलित पद्धति का क्रम (कोर्स) जैसे प्रार्थना, ध्यान, प्राणायाम, सत्सङ्ग, सात्त्विक भोजन, एकान्तवास, शुद्ध विचार, आसन, बन्ध, मुद्रा इत्यादि अपना लें । तब कहीं आप ब्रह्मचर्य में स्थित हो सकेंगे ।

(७५) सड़क पर चलते समय बन्दर की भाँति इधर-उधर मत देखें । अपने पैर के अँगूठे की नोक को देखते हुए शान्तिपूर्वक चलें अथवा भूमि को देखते हुए चलें, इससे ब्रह्मचर्यपालन में अत्यन्त योग मिलेगा ।

(७६) चित्त-वृत्तियों तथा मनोविकार का पूर्णरूप से दमन या अवरोध ही योग है ।

(७७) 'योग' शब्द अपने गौण अर्थ में योग के उन अङ्गों और विविध क्रियाओं को सूचित करता है जो योग को बनाती हैं; क्योंकि योग की पूर्णता के लिए ये साधन हैं और परोक्ष रूप में मुक्ति की ओर अग्रसर करते हैं। जप, प्रार्थना, प्राणायाम, सत्सङ्ग और अध्ययन —ये सब योग हैं ? यह गौण है।

(७८) आसन और प्राणायाम सब प्रकार के रोगों को दूर करके स्वास्थ्य में सुधार लाते हैं, पाचन-शक्ति को बढ़ाते हैं, नाड़ियों को सञ्जीवित करते हैं, सुषुम्ना-नाड़ी को सीधी करते हैं और रजोगुण को दूर करके कुण्डलिनी को जाग्रत करते हैं। आसन-प्राणायाम के अभ्यास से स्वास्थ्य सुन्दर बनता है और स्थिर चित्त की प्राप्ति होती है; क्योंकि जैसे अच्छे स्वास्थ्य के विना कोई साधना सम्भव नहीं है, उसी प्रकार स्थिर चित्त के विना ध्यान सम्भव नहीं। ध्यानयोगी, कर्मयोगी, भक्त और वेदान्ती सभी के लिए हठयोग का अत्यधिक महत्त्व है।

(७९) योगी प्रकृति की सारी शक्तियों पर आधिपत्य प्राप्त कर लेता है और उनका इच्छानुसार उपयोग कर सकता है। उसे पञ्चतत्त्वों पर पूर्ण नियन्त्रण प्राप्त हो जाता है।

—●—

आसनों का उपयोग

प्रयोजन	आसन
१– ध्यान और अध्ययन	पद्मासन, सिद्धासन, स्वस्तिकासन अथवा सुखासन
२– कामवासना का ऊर्ध्वीकरण, उपदंश, अनभिप्रेत शुक्रपात, दन्तपूय, सूजाक, वन्ध्यता, कुण्डलिनी-जागरण, स्मरण-शक्ति का ह्रास मधुमेह, क्षय, दमा, वृक्क-शूल, सन्धिवात, कान, नाक, नेत्र के रोग आदि	सिद्धासन, शीर्षासन, सर्वाङ्गासन, मत्स्यासन अथवा अर्धमत्स्येन्द्रासन
३– अनार्तव, कष्टार्तव, श्वेत प्रदर, गर्भाशय तथा अण्डाशय-सम्बन्धी रोग	सर्वाङ्गासन, शलभासन, पश्चिमोत्तानासन और भुजङ्गासन (गर्भावस्था में ये आसन वर्जित हैं)
४– पुराना क्लोमनाल-कोप	मत्स्यासन तथा शलभासन
५– पाचन	सर्वाङ्गासन, वज्रासन, पश्चिमोत्तानासन और बद्ध-पद्मासन
६– प्लीहा तथा यकृत वृद्धि	सर्वाङ्गासन, हलासन, मयूरासन और बद्धपद्मासन

प्रयोजन	आसन
७— जीर्ण मलावरोध	हलासन, मयूरासन, धनुरासन, मत्स्यासन और पादहस्तासन
८— जलवृषण, श्लीपद, टाँगों और हाथों का... छोटा हो जाना	गरुड़ासन, त्रिकोणासन और उत्कटासन
९— अर्श	सिद्धासन, पश्चिमोत्तानासन, शीर्षासन, गोमुखासन और महामुद्रा
१०— आमातिसार तथा रक्तातिसार	बद्धपद्मासन और कुक्कुटासन
११— पेशीशूल और सन्धिवात	वृश्चिकासन, शीर्षासन, पश्चिमोत्तानासन, सर्वाङ्गासन इत्यादि
१२— कुष्ठरोग	शीर्षासन और महामुद्रा
१३— विश्राम	शवासन

प्रयोजन	आसन
१४– सर्वरोग-निवारक तथा दीर्घायु-प्रदायक ...	पद्मासन, शीर्षासन, सर्वाङ्गासन तथा पश्चिमोत्तानासन

नोट :—यदि आप पुराने रोगों से ग्रसित हों तो आपको मुद्रा, प्रणायाम और जप भी संयुक्त करने होंगे। यदि इनमें से कोई विशेष मद आपकी प्रकृति को उपयुक्त न हो तो आप अपने आध्यात्मिक गुरु से परामर्श करें। आपको हार्दिक भाव और धैर्य से दीर्घकाल तक इनका अभ्यास करना होगा।

चतुर्थ अध्याय

महत्त्वपूर्ण मुद्राएँ और बन्ध

मुद्रा और बन्ध के अनेक प्रकार हैं, जैसे महाबन्ध, जालन्धरबन्ध, उड्डीयानबन्ध, मूलबन्ध और महामुद्रा, महावेध, नभोमुद्रा, खेचरी-मुद्रा, विपरीतकरणीमुद्रा, योनिमुद्रा, शाम्भवीमुद्रा, अश्विनीमुद्रा, पाशिनी-मुद्रा, मातङ्गीमुद्रा, काकीमुद्रा, भुजङ्गीमुद्रा और योगमुद्रा।

इनमें से कुछ महत्त्वपूर्ण मुद्राओं एव बन्धों का संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है। इनमें से आपको जो उपयोगी लगे उसे चुन कर नियमित रूप से अभ्यास करिए। इनसे खाँसी, श्वास का रोग, प्लीहा तथा यकृत वृद्धि, काम-वासना का आवेग, रति-रोग, क्षय-रोग, जीर्ण मलावरोध, कुष्ठरोग एवं सभी असाध्य रोग दूर हो जाते हैं। इन मुद्रा और बन्धों से आपको मन-वाञ्छित फल प्राप्त होगा, क्योंकि —

नास्ति मुद्रा समं किञ्चित् संसिद्ध्ये क्षितिमण्डले।

अर्थात् पृथ्वी पर मुद्राओं के समान सिद्धि दिलाने वाला और कुछ भी नहीं है।

(१) महामुद्रा

बायीं एड़ी से गुदा को सावधानीपूर्वक दबायें। दायीं टाँग आगे फैला लें। दोनों हाथों से पाँव के अँगूठे को पकड़ लें। श्वास ले कर उसे रोकें (कुम्भक)। ठुड्डी को सीने पर दृढ़ता से दबायें (जालन्धर-बन्ध)। दृष्टि को त्रिकुटी पर जमायें (अर्थात् भ्रूमध्य-दृष्टि)। जितनी देर हो सके इस मुद्रा को

रखें। पहले बायीं टाँग से और फिर दायीं टाँग से अभ्यास करें। इससे क्षय, अर्श अथवा बवासीर, प्लीहा का बढ़ना, अपच, गुल्म, कुष्ठ, मलावरोध, ज्वर आदि रोग दूर होते हैं तथा आयु बढ़ती है। यह अभ्यास करने वाले साधक को बड़ी सिद्धियाँ प्रदान करता है। इस मुद्रा को करने पर प्रायः जानुशीर्षासन जैसी आकृति बन जायगी।

(२) योगमुद्रा

पद्मासन में बैठ कर हथेलियों को एड़ियों पर रखें। धीरे-धीरे श्वास बाहर निकालें तथा आगे को झुकें और मस्तक को भूमि से स्पर्श करें। यदि आप इस मुद्रा को देर तक रखते हैं तो आप हमेशा की तरह श्वास ले और निकाल सकते हैं अथवा आप पूर्वावस्था में आ कर पुनः श्वास ले सकते हैं। हाथों को एड़ियों पर रखने के बजाय उन्हें पीठ की ओर ले जा सकते हैं। अपने बायें मणिबन्ध (कलाई) को दायें हाथ से पकड़ें। इस मुद्रा से समस्त प्रकार के उदर-रोग दूर होते हैं।

(३) खेचरीमुद्रा

'खे' का अर्थ 'आकाश' और 'चर' का अर्थ है चलना। योगी आकाश में चलता है; इसलिए इसे खेचरीमुद्रा कहते हैं।

इस मुद्रा को केवल वही व्यक्ति कर सकता है जिसने अपना प्रारम्भिक अभ्यास ऐसे गुरु के साक्षात् मार्ग-दर्शन में किया हो जो स्वयं खेचरीमुद्रा करते हों। इस मुद्रा का प्रारम्भिक अंश जिह्वा को इतनी लम्बी बनाना है कि उसका अग्रभाग भृकुटी के मध्य वाले स्थान को स्पर्श कर सके। प्रति सप्ताह गुरु जिह्वा के नीचे की तन्तु को थोड़ी-थोड़ी करके स्वच्छ तथा तीक्ष्ण धार वाले यन्त्र (चाकू) से काटता रहेगा। नमक और हल्दी लगाने से कटे हुए तन्तु फिर से नहीं जुड़ेंगे। जिह्वा को ताजा मक्खन लगायें और उसे बाहर

खींचें। अँगुलियों से जिह्वा को पकड़ कर उसे इधर-उधर घुमायें। जिह्वा के दोहन का अर्थ है उसे पकड़ कर इस प्रकार खींचना जिस प्रकार गाय का दूध निकालते समय गाय के थनों को पकड़ कर दूध निकाला जाता है।

जिह्वा के नीचे वाले तन्तु को नियमित रूप से सप्ताह में एक बार काटना चाहिए। यह कार्य ६ माह से ले कर २ वर्ष तक किया जाना चाहिए। इन सब विधियों से आप जिह्वा को इतनी लम्बी कर सकते हैं कि वह मस्तक को स्पर्श कर लेगी। खेचरीमुद्रा का यह प्रारम्भिक अंश है।

इसके पश्चात् सिद्धासन में बैठ कर जिह्वा को ऊपर और पीछे की ओर इस प्रकार मोड़ें कि वह तालु को स्पर्श कर ले और जिह्वा से नाक के पश्च द्वार (Posterior nasal opening) को ढक ले। आप अपनी दृष्टि को दोनों भौंहों के मध्य-भाग पर स्थिर करें। श्वास-क्रिया रुक जायेगी। जिह्वा अमृत-कूप के मुँह पर है। यह खेचरीमुद्रा है।

इस मुद्रा के अभ्यास से योगी मूर्च्छा, क्षुधा, पिपासा और आलस्य से मुक्त हो जायेगा। इससे उसे रोग, क्षीणता वृद्धावस्था और मृत्यु से मुक्ति मिलेगी। इस मुद्रा से योगी ऊर्ध्वरेता बनता है। क्योंकि योगी का शरीर अमृत से पूर्ण हो जाता है, अतः वह घातक विष से भी नहीं मरता। यह मुद्रा योगियों को कायसिद्धि प्रदान करती है। खेचरी सर्वश्रेष्ठ मुद्रा है।

(४) वज्रोलीमुद्रा

यह हठयोग में एक महत्त्वपूर्ण योगिक क्रिया है। इस क्रिया में पूर्ण सफल होने के लिए आपको कठिन परिश्रम करना पड़ेगा। इस क्रिया में बहुत कम साधक दक्ष होते हैं। योग के विद्यार्थी विशेष प्रकार की बनवायी हुई एक १२ इञ्च लम्बी चाँदी की नली को मूत्रेन्द्रिय में प्रवेश करा कर इसके द्वारा पहले पानी खींचते हैं फिर दूध, तेल, मधु आदि खींचते हैं। अन्त में वे

पारा खींचते हैं। कुछ समय बाद वे बिना नली के सहारे सीधे मूत्रेन्द्रिय द्वारा इन तरल पदार्थों को खींच लेते हैं। ब्रह्मचर्य-साधना के लिए यह क्रिया अत्युपयोगी है। प्रथम दिन मूत्रेन्द्रिय में केवल १इञ्च नली ही प्रवेश करायें, दूसरे दिन २ इञ्च, तीसरे दिन ३ इञ्च, इसी प्रकार इसे बढ़ाते जायें। जब तक १२ इञ्च नली भीतर प्रवेश न हो सके तब तक क्रमशः अभ्यास करते रहें।

राजा भर्तृहरि इस क्रिया को बहुत दक्षता से कर लेते थे। इस मुद्रा को करने वाले योगी का एक बूंद वीर्य भी बाहर नहीं आ सकता और यदि निकल भी जाय तो उस मुद्रा द्वारा उसे वापस अन्दर खींच सकता है। जो योगी वीर्य को ऊपर खींच कर सुरक्षित रख सकता है वह मृत्यु पर भी विजय पा लेता है। उसके शरीर से सुगन्ध निकलती है। भगवान् कृष्ण इस मुद्रा में बड़े कुशल थे, इसलिए अनेक गोपियों के मध्य रहते हुए भी उन्हें नित्य ब्रह्मचारी कहा जाता है।

(५) विपरीतकरणीमुद्रा

भूमि पर लेट कर टाँगों को सीधे ऊपर उठायें। कूल्हों को हाथों से सहारा दें। कोहनियाँ भूमि पर टेक लें। स्थिर बने रहें। नाभि के मूल में सूर्य का और तालु-मूल में चन्द्रमा का निवास है। जिस प्रक्रिया से सूर्य को ऊपर की ओर और चन्द्रमा को नीचे की ओर लिया जाता है वह विपरीत-करणीमुद्रा कहलाती है। इस मुद्रा में सूर्य और चन्द्रमा के प्रवाह को पलट दिया जाता है। प्रथम दिन इसे एक मिनटभर के लिए करें। धीरे-धीरे इसे तीन घण्टे तक बढ़ा दें। छः महीने में आपके चेहरे की झुर्रियाँ और श्वेत बाल लुप्त हो जायेंगे। जो योगी इसे तीन घण्टे रोज करते हैं, वे मृत्यु पर विजय पा लेते हैं। क्योंकि इससे जठराग्नि (Gastric Fire) बढ़ती है;

अतः जो लोग इस मुद्रा का अभ्यास देर तक करते हैं उन्हें इस क्रिया की समाप्ति पर हलका-सा नाश्ता, जैसे दूध आदि, ले लेना चाहिए। शीर्षासन की मुद्रा भी विपरीतकरणीमुद्रा कहलाती है।

(६) शक्तिचालनमुद्रा

एकान्त स्थान में सिद्धासन में बैठें। बलपूर्वक श्वास को अन्दर खींच कर उसे अपान के साथ जोड़ें। वायु के सुषुम्ना में प्रवेश करने तक मूलबन्ध लगायें। श्वास को रोकने से कुण्डलिनी का दम घुटने के कारण वह जाग्रत हो जाती है और सुषुम्ना में हो कर ब्रह्मरन्ध्र में पहुँचती है। इस मुद्रा के अभ्यास से कोई भी व्यक्ति सिद्ध हो सकता है।

सिद्धासन में बैठें। टखने के पास से पैर को पकड़ कर धीरे-धीरे पैर से कन्द को पीड़ित करें। यह ताड़न-क्रिया है। इस पद्धति से भी कुण्डलिनी जाग्रत हो जाती है।

(७) महावेध

अन्यत्र वर्णन किये अनुसार महाबन्धमुद्रा में बैठें। धीरे-धीरे श्वास खींच कर उसे रोकें और ठोड़ी को सीने पर दबायें (जालन्धरबन्ध)। हथेलियों को भूमि पर रखें। शरीर को हथेलियों के बल पर रहने दें। कूल्हों को धीरे-धीरे उठा कर हलके से भूमि पर पटक दें। कूल्हों को ऊपर उठाते समय आसन ठीक दृढ़ होना चाहिए। इस क्रिया से शरीर की जर्जरता नष्ट हो कर मृत्यु पर विजय प्राप्त होती है। योगी मन पर नियन्त्रण प्राप्त करके मृत्यु पर विजय प्राप्त कर सकते हैं।

(८) महाबन्ध

बायीं एड़ी से गुदा को दबा कर दायाँ पैर बायीं जङ्घा पर रखें। गुदा

एवं योनि की पेशियों या मूलाधार को आपस में स्पर्श करने दें। अपान-वायु को ऊपर की ओर खीचें। धीरे-धीरे श्वास को खींच कर जालन्धरबन्ध द्वारा यथाशक्ति श्वास रोकें। फिर धीरे-धीरे श्वास को बाहर निकाल दें। मन को सुषुम्ना पर स्थिर करें। प्रथम बायीं ओर से और फिर दायीं ओर से अभ्यास करें। सामान्यतया योगी लोग महामुद्रा, महाबन्ध एवं महावेध साथ-साथ करते हैं। यह एक अच्छा समन्वय है। ऐसा करने से ही सर्वाधिक लाभ प्राप्त होता है। योगी अपने सब मनोरथों की पूर्त्ति करता है तथा सिद्धियाँ प्राप्त करता है।

(६) मूलबन्ध

बायीं एड़ी से योनि को दबायें और गुदा को सिकोड़ें। अभ्यास के द्वारा धीरे-धीरे अपान-वायु को बलपूर्वक ऊपर को खींचें। दायीं एड़ी को जननेन्द्रिय पर रखें। इसे मूलबन्ध कहते हैं जो क्षीणता और मृत्यु का विनाशक है।

प्राणायाम के अभ्यास में सिद्धि अथवा पूर्णता बन्धों की सहायता से प्राप्त होती है। इस मूलबन्ध के अभ्यास से ब्रह्मचर्य में योग मिलता है, धातु-पुष्टि होती है, मलावरोध दूर होता है और जठराग्नि बढ़ती है। मूलबन्ध का अभ्यास करने वाला योगी सदा युवा बना रहता है। उसके बाल सफेद नहीं होते।

अपान-वायु जो मल को बाहर निकालने का कार्य करती है स्वभावतः नीचे की ओर जाती है। मूलबन्ध के अभ्यास से गुदा को सिकोड़ने और अपान-वायु को बलपूर्वक खींचने से वह ऊपर की ओर सञ्चारित होने लगती है। प्राण-वायु का अपान-वायु से संयोग होता है और यह संयुक्त प्राण-अपान-वायु सुषुम्ना-नाड़ी अथवा ब्रह्म-नाड़ी में प्रवेश कर जाती है। तब योगी योग में पूर्णता प्राप्त करता है : यह योग का एक रहस्य है। तब योगी इस संसार के लिए

भर जाता है। वह अमरता का अमृत पान करता है। वह सहस्रार में शिव-पद का आनन्द-लाभ करता है। उसे समस्त दिव्य विभूतियाँ और ऐश्वय प्राप्त होते हैं।

जब अपान-वायु प्राण-वायु से मिलती है तब योगी को अनाहत-नाद अथवा विभिन्न प्रकार के अन्तर्नाद स्पष्ट रूप से सुनायी पड़ते हैं: क्योंकि अब बाहरी संसार के शब्द उसे नहीं सुनायी देते हैं। उसे गम्भीर एकाग्रता प्राप्त हो जाती है। प्राण, अपान, नाद और बिन्दु मिल जाते हैं। योगी योग में पूर्णता प्राप्त कर लेता है।

(१०) जालन्धरबन्ध

गले को सिकोड़ें। ठोड़ी को दृढ़ता से सीने पर दबायें। यह बन्ध पूरक के अन्त में और कुम्भक के आरम्भ में किया जाता है। इस बन्ध के अभ्यास से प्राण-वायु सही मार्ग में होती है। वह अपान-वायु से मिल जाती है। इड़ा और पिङ्गला नाड़ियाँ बन्द हो जाती हैं। नाभि-केन्द्र में स्थित जठराग्नि उस अमृत को भस्म करती है जो तालुरन्ध्र द्वारा सहस्रार से बहता है। इस अमृत को इस प्रकार नष्ट होने से बचाने के लिए योग के विद्यार्थी को इस बन्ध का अभ्यास करना चाहिए। योगी अमृत पान करके अमरता को प्राप्त करता है।

(११) उड्डीयानबन्ध

बलपूर्वक जोर से श्वास को बाहर निकाल कर फेफड़ों को खाली कर लें। फिर आँतों और नाभि को सिकोड़ लें और उन्हें बलपूर्वक पीठ की ओर अन्दर खींचें, जिससे उदर ऊपर उठ कर शरीर के पीछे की ओर वक्षीय

गुहा (Thoracic cavity) में चला जाय। इस बन्ध का निरन्तर अभ्यास करने वाला साधक मृत्यु पर विजय प्राप्त करता हुआ सदा युवा बना रहता है। इससे ब्रह्मचर्य धारण करने में अधिक योग प्राप्त होता है। सभी बन्ध कुण्डलिनी जाग्रत करते हैं। उड्डीयानबन्ध का अभ्यास कुम्भक के अन्त और रेचक के आरम्भ में किया जाता है। जब आप इस आसन का अभ्यास करते हैं तो उरःप्राचीर (Diaphragm) (जो कि वक्षीय गुहा एवं उदर के मध्य मांसपेशी का एक भाग होता है) ऊपर उठ जाता है और पेट की दीवार पीछे चली जाती है। उड्डीयान करते समय अपने धड़ को आगे की ओर झुकायें। उड्डीयान बैठे हुए और खड़े हुए दोनों अवस्थाओं में किया जा सकता है। खड़े हो कर करते समय हाथों को घुटनों पर या घुटनों से थोड़ा ऊपर रखें। टाँगों को थोड़ा दूर-दूर रखें।

उड्डीयान मानव के लिए वरदान है। यह अभ्यास करने वाले को सुन्दर स्वास्थ्य, शक्ति, ओज और जीवन-शक्ति प्रदान करता है। नौलि-क्रिया को जो पेट के मल को मथ डालती है इसके साथ मिला देने से यह एक शक्तिशाली जठरान्त्रीय बलकारक औषधि (Gastro-Intestinal Tonic) का काम करता है। कोष्ठबद्धता, आँतों की दुर्बलता तथा पाचक-तन्त्र के जठ-रान्त्र विकार से सङ्घर्ष करने के लिए योगी के पास ये दो महत्त्वपूर्ण अस्त्र हैं। इन दो योगिक व्यायामों के करने मात्र से ही आप उदर के आन्तरिक अङ्गों की मालिश तथा पुष्टि कर सकते हैं।

जो नौलि का अभ्यास करना चाहें; उन्हें आरम्भ में उड्डीयान करना चाहिए। उड्डीयान पेट की वसा को कम करता है। पेट के व्यायामों में उड्डीयान और नौलि की बराबरी का कोई अन्य व्यायाम नहीं है। प्राच्य और पाश्चात्य दोनों देशों में सम्पूर्ण भौतिक व्यायाम-पद्धतियों में ये दोनों व्यायाम अनुपम, अद्वितीय और अभूतपूर्व हैं।

(१२) योनिमुद्रा

सिद्धासन में बैठ जायें। दोनों अँगूठों से कान को, तर्जनियों से आँखों को, मध्यमा अँगुलियों से नासा-रन्ध्रों को, अनामिका अँगुलियों से ऊपर के ओष्ठ को तथा कनिष्ठ अँगुलियों से अधरोष्ठ को बन्द करें। जप करने के लिए यह सुन्दर मुद्रा है। बड़ी गहराई में चले जायें और षट्-चक्रों और कुण्डलिनी- पर ध्यान लगायें। अन्य मुद्राओं की भाँति यह सबके लिए बिलकुल सरल नहीं है। इसमें सफलता प्राप्त करने के लिए आपको प्रचुर श्रम करना पड़ेगा। यदि आप इस मुद्रा में निश्चयपूर्वक सफलता प्राप्त करना चाहते हैं तो आपको पूर्ण रूप से ब्रह्मचर्य का पालन करना होगा। इसमें सफलता प्राप्त करना 'देवानामपि दुर्लभा' अर्थात् यह देवताओं के लिए भी दुर्लभ है। अतः इस मुद्रा की महत्ता को अनुभव करें। इसका अभ्यास बड़ी सावधानीपूर्वक करें। उदाहरण के लिए अन्यत्र देखिए।

—❁—

पञ्चम अध्याय
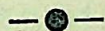
प्राणायाम-विज्ञान

कुम्भक आठ प्रकार के हैं :—

(१) सूर्यभेद,
(२) उज्जायी,
(३) शीतकारी,
(४) शीतली,
(५) भस्त्रिका,
(६) भ्रामरी,
(७) मूर्च्छा, तथा
(८) प्लावनी ।

कुछ पुस्तकों में प्लावनी-प्राणायाम को आठवाँ कुम्भक कहा है । कुछ में केवल कुम्भक को आठवाँ प्रकार कहा है । यद्यपि कपालभाति षट्-कर्म से सम्बन्धित है, फिर भी मैंने इसका वर्णन यहाँ किया है; क्योंकि यह प्राणायाम-व्यायाम का ही एक भेद है ।

प्राण वह वायु है, जो शरीर में सञ्चालित होता है और जब इसे शरीर के भीतर रोक लिया जाता है, तो यह कुम्भक कहलाता है । यह दो प्रकार का होता है—'सहित' और 'केवल' । कोई भी व्यक्ति हठयोग के विना राजयोग में पूर्णता प्राप्त नहीं कर सकता । कुम्भक के अन्त में आपको अपने मन को सभी विषयों से हटा लेना चाहिए । धीरे-धीरे और निरन्तर अभ्यास से आप राजयोग में प्रवेश कर लेंगे ।

(विस्तृत एवं पूर्ण निर्देशों के लिए मेरी पुस्तक 'प्राणायाम-साधना' देखें ।)

अभ्यास सं० १

पद्मासन में बैठ जायें। अपने नेत्रों को बन्द कर लें और त्रिकुटी पर ध्यान जमायें। दायें नासिका-छिद्र को दायें हाथ के अँगूठे से बन्द कर लें।

फिर धीरे-धीरे बायें नासिका-छिद्र से आरामपूर्वक जितनी देर श्वास ले सकते हों, लें। श्वास लेते समय किसी प्रकार का शब्द मत करें; फिर धीरे-धीरे श्वास निकाल दें। अपने इष्टमन्त्र का मानसिक जप करते रहें। यह क्रिया बारह बार करें, इससे एक चक्र बनेगा।

फिर बायें नासिका-छिद्र को बायीं अनामिका और कनिष्ठा अँगुलियों से बन्द कर के दायें नासिका-छिद्र से श्वास लें। पहले की भाँति दायें नासिका-छिद्र से धीरे-धीरे श्वास खींचें और अँगूठे से दायें नथुने को बन्द करके श्वास छोड़ें। इस प्रकार बारह बार करें।

अभ्यास के दूसरे सप्ताह में दो चक्र और तीसरे सप्ताह में तीन चक्र करें। एक चक्र पूरा होने पर पाँच मिनट तक विश्राम करें। एक चक्र के पूर्ण होने पर यदि आप सामान्य तौर पर कुछ श्वास लेते हों, तो इससे भी आपको पर्याप्त विश्राम मिलेगा और दूसरा चक्र करने के लिए स्फूर्ति आयेगी। इसमें कुम्भक नहीं करना होता है।

अभ्यास सं. २

आसन पर बैठें। दायें नासारन्ध्र को दायें अँगूठे से बन्द करें। फिर धीरे-धीरे बायें नासारन्ध्र से श्वास लें। बायें नासारन्ध्र को अपनी दाहिनी अनामिका और कनिष्ठा अँगुलियों से बन्द करें और फिर दायाँ अँगूठा हटा कर दायाँ नासारन्ध्र खोल दें। इसके बाद दायें नासारन्ध्र से धीरे-धीरे श्वास निकाल दें।

अब दायें नासारन्ध्र से जितनी देर आरामपूर्वक आप धीरे-धीरे श्वास ले सकते हैं, लें। फिर बायें नासारन्ध्र से अनामिका एवं कनिष्ठा अँगुलियों को हटा कर श्वास छोड़ दें। इस प्राणायाम में भी कुम्भक नहीं है। इसे भी बारह बार करें। इससे एक चक्र बनेगा।

(१) कपालभाति

इस प्राणायाम से साधक भस्त्रिका-प्राणायाम करने के लिए तैयार होता है। यह हठयोग में वर्णित षट्-क्रियाओं में से एक क्रिया है। जो लोग कपाल-भाति में दक्ष हैं, वे भस्त्रिका-प्राणायाम बड़ी सरलता से कर सकते हैं।

पद्मासन लगा कर बैठ जायें। हाथों को घुटनों पर रखें। फिर लोहार की धौंकनी की भाँति तीव्रता से पूरक और रेचक करें। यह कपालभाति कहलाता है। यह अभ्यास बहुत तेजी से करना चाहिए। इससे बहुत पसीना आयेगा। इस अभ्यास में कुम्भक नहीं है। इसमें रेचक का महत्त्वपूर्ण भाग है। इसमें तीव्र अनुक्रम से एक प्रश्वास के पश्चात् दूसरा प्रश्वास निकलता है। यह शक्तिशाली अभ्यास है। इसके अभ्यास से समस्त ऊतक (Tissues), कोश, स्नायु तथा अणु प्रभावपूर्ण ढङ्ग से काम करेंगे।

प्रारम्भ में आप प्रति सेकण्ड एक प्रश्वास की गति रख सकते हैं। धीरे-धीरे गति बढ़ा कर आप प्रति सेकण्ड दो श्वास निकालना आरम्भ कर दें। प्रारम्भ में प्रातःकाल 'कपालभाति' का केवल एक चक्र करें, जिसमें केवल दश प्रश्वास होंगे। दूसरे सप्ताह में प्रातः एक चक्र और सायं एक चक्र करें। तीसरे सप्ताह में दो चक्र प्रातः और दो चक्र सायं करें। चौथे सप्ताह में तीन चक्र प्रातः और तीन चक्र सायं करें। एक चक्र पूरा होने पर कुछ सामान्य श्वास ले कर थोड़ा आराम कर लें। इससे आप बड़ी आसानी से विश्राम प्राप्त करेंगे। बाद में जब आपका अभ्यास पर्याप्त रूप से बढ़ जाये, तो प्रत्येक चक्र में प्रश्वास बढ़ाते-बढ़ाते इतना कर लें कि प्रत्येक चक्र में १२० प्रश्वास हो जायँ।

इस अभ्यास से कपाल, श्वास-प्रणाली तथा नासा-मार्ग स्वच्छ हो जाते हैं। यह कफ-रोग को ठीक करता है। यह श्वासनली की ऐंठन (Spasm) को दूर करता है जिसके फल-स्वरूप दमा के रोग को आराम मिलता है और रोग दूर हो जाता है। फेफड़ों के अग्रभाग (Apices) को प्रचुर प्राणप्रद वायु (आक्सीजन) मिलती है। इससे क्षयरोगजनक कीटाणुओं को पलने का मौका ही नहीं मिल पाता। अतः इसके अभ्यास से क्षयरोग वाला रोगी भी ठीक हो जाता है और फेफड़े अधिक विकसित होते हैं। इससे विषैली वायु (कार्बन डाई आक्साइड) बहुत अधिक मात्रा में शरीर से निकल जाती है, रक्त शुद्ध हो जाता है और ऊतक एवं कोषों को बड़ी मात्रा में प्राणप्रद वायु (आक्सीजन) मिलती है। हृदय ठीक-ठीक काम करने लगता है। इससे रक्त-सञ्चार-प्रणाली, श्वसन-तन्त्र एवं पाचन-तन्त्र यथेष्ट अंश तक ठीक हो जाते हैं।

(२) सूर्यभेद

पद्मासन अथवा सिद्धासन पर बैठ जायें। नेत्र बन्द कर लें। दायें हाथ की अनामिका और कनिष्ठा अँगुलियों से बायाँ नासारन्ध्र बन्द कर लें। बिना शब्द किये श्वास को जितनी देर आराम से खींच सकें, दायें नासारन्ध्र से धीरे-धीरे अन्दर की ओर खींचें। फिर ठोड़ी को सीने पर दबा कर (जालन्धर-बन्ध) श्वास को रोक लें (कुम्भक)। जब तक नाखूनों के सिरे से और बालों की जड़ों से पसीना न टपकने लगे, तब तक श्वास को रोके रखें। आरम्भ में इस स्थिति तक नहीं पहुँचा जा सकता। आपको कुम्भक की अवधि धीरे-धीरे बढ़ानी पड़ेगी। यह सूर्यभेद के अभ्यास के क्षेत्र की पराकाष्ठा है। अब बहुत धीरे-धीरे किसी प्रकार का शब्द किये बिना बायें नासारन्ध्र से श्वास को बाहर निकाल दें और दायाँ नासारन्ध्र अँगूठे से बन्द कर दें। श्वास को ऊपर ले जा कर कपाल को शुद्ध करने के उपरान्त श्वास निकाल दें। इससे आँतों के कीड़े नष्ट होते हैं और रोग दूर होते हैं। यह वायु से उत्पन्न चार प्रकार

के दोषों को दूर करता है। वात (गठिया) रोग नष्ट हो जाता है। इससे नासिका-प्रदाह (Rhinitis), शिर का दर्द (Cephalagia), स्नायुशूल (Neuralgia) आदि कई प्रकार के रोग दूर होते हैं। इससे ललाट या नासूर-छिद्र में पाये जाने वाले कीड़े भी नष्ट हो जाते हैं। इससे मनुष्य जर्जरता एवं मृत्यु पर बिजय प्राप्त कर कुण्डलिनी-शक्ति को जाग्रत करता है।

(३) उज्जाई

पद्मासन या सिद्धासन में बैठें। मुँह बन्द रखें। दोनों नथुनों द्वारा हलका-हलका समरूप से धीरे-धीरे श्वास लें, जब तक कि गले से हृदय तक का स्थान श्वास आवाज करते हुए भर न दे। जितनी देर श्वास को आराम से रोक सकें, रोकें और फिर दायें नासारन्ध्र को दायें अँगूठे से बन्द कर के धीरे-धीरे बायें नासारन्ध्र से श्वास छोड़ें। श्वास लेते समय सीने को फैलायें। कण्ठद्वार (Glottis) के आंशिक रूप से बन्द होने के कारण श्वास लेते समय एक विचित्र-सी ध्वनि निकलती है। श्वास खींचते समय उत्पन्न ध्वनि बहुत हलकी और एक समान होनी चाहिए और यह अविच्छिन्न भी होनी चाहिए। इस कुम्भक का अभ्यास चलते समय अथवा खड़ा होते समय भी किया जा सकता है। बायें नासारन्ध्र से श्वास छोड़ने के बजाय, आप दोनों नासारन्ध्रों से धीरे-धीरे श्वास निकाल सकते हैं।

इससे मस्तिष्क की गरमी दूर हो जाती है, अभ्यास करने वाला अति-सुन्दर हो जाता है, जठराग्नि बढ़ती है तथा दमा, क्षय-रोग और सब प्रकार की फुफ्फुसीय (Pulmonary) बीमारियाँ दूर होती हैं। जर्जरता और मृत्यु को जीतने के लिए उज्जाई करें।

(४) शीतकारी

जिह्वा को इस प्रकार मोड़ें कि उसका अग्रभाग ऊपरी तालु को स्पर्श करे। फिर सी-सी-सी का शब्द करते हुए वायु को मुँह द्वारा खींचें। फिर

बिना दम घुटने का अनुभव करते हुए, जितनी देर श्वास रोका जा सके, रोकें और फिर धीरे-धीरे दोनों नासारन्ध्रों द्वारा श्वास निकाल दें। दाँतों की दोनों पंक्तियों को भींच लें और फिर पहले की भाँति मुँह द्वारा श्वास लें। यह एक थोड़ा परिवर्त्तन है।

इस प्राणायाम के अभ्यास से साधक का सौन्दर्य बढ़ता है और शारीरिक स्फूर्त्ति बढ़ती है। इससे भूख, प्यास, सुस्ती और नींद का निवारण होता है। जब प्यास लगे तो इसका अभ्यास करें, आपकी प्यास तुरन्त शान्त हो जायगी।

(५) शीतली-प्राणायाम

जिह्वा को होठों से बाहर निकाल कर उसको नली की भाँति मोड़ लें। सी-सी का शब्द करते हुए मुँह द्वारा श्वास को अन्दर की ओर खींचें। जितनी देर आराम से श्वास को रोक सकें, रोकें। फिर धीरे-धीरे नासारन्ध्रों द्वारा श्वास निकाल दें। नित्य प्रति प्रातः १५ से ३० मिनट तक इसका अभ्यास करें। आप यह प्राणायाम पद्मासन अथवा सिद्धासन में कर सकते हैं।

इस प्राणायाम से रक्त शुद्ध होता है, भूख और प्यास शान्त होती है और अङ्गों की प्रक्रिया शान्त होती है। इससे गुल्म, प्लीहा, अनेक पुराने चर्म-रोग, ज्वर, क्षय-रोग, अजीर्ण, पित्त की अधिकता, बलगम और अन्य रोग दूर होते हैं। विषाक्त रक्त ठीक हो जाता है। यदि आप कहीं जङ्गल में या अन्य ऐसे स्थान पर हों, जहाँ जल न मिले और वहाँ प्यास लगे तो यह प्राणायाम कर लें, तुरन्त प्यास शान्त हो जायेगी। इस प्राणायाम का अभ्यास करने वाले पर सर्प या बिच्छू के विष का प्रभाव नहीं होता।

(६) भस्त्रिका-प्राणायाम

संस्कृत में भस्त्रिका का अर्थ भाथी है। भस्त्रिका की एक प्रमुख विशेषता यह है कि गतिपूर्वक निरन्तर श्वास निकालना। जिस प्रकार लोहार अपनी भाथी

को तेजी से धौंकता है उसी प्रकार आपको भी इस अभ्यास में अपने श्वास को तीव्र गति से चलाना होगा। पद्मासन में बैठ जायें। शरीर, गरदन तथा शिर को तना हुआ रखें। हथेलियों को घुटनों पर या गोद में, रखें। मुँह वन्द रखें। अब लोहार की भाथी के समान ५ से १० बार तीव्र गति से श्वास-प्रश्वास लें। निरन्तर फेफड़ों को फुलायें और पिचकायें। जब आप इस प्राणायाम का अभ्यास करेंगे तो सिसकार का शब्द होगा। अभ्यास करने वाले साधक को प्रारम्भ में तीव्र क्रम से तेज गति से एक के बाद दूसरा श्वास निकालना चाहिए। जब एक चक्र के लिए आवश्यक संख्या यथा १० पूरी हो जाय, तो अन्तिम चक्र के बाद एक गहरा श्वास लीजिए और सुविधानुसार जितनी देर तक इस श्वास को रोका जा सके, रोकना चाहिए। इस गम्भीर प्रश्वास से भस्त्रिका का एक चक्र पूरा होता है। एक चक्र पूरा होने पर कुछ सामान्य श्वास लेते हुए थोड़ा विश्राम कर लें। इससे आपको विश्राम मिलेगा और आप दूसरा चक्र आरम्भ कर सकेंगे। नित्य प्रातः तीन चक्र करें। तीन चक्र सायङ्काल को भी कर सकते हैं। व्यस्त व्यक्ति, जिन्हें भस्त्रिका के तीन चक्र नित्य प्रति करना कठिन लगता हो, केवल एक चक्र कर सकते हैं।

यह भी साधक को स्वस्थ रखेगा। भस्त्रिका एक प्रभावशाली प्राणायाम है। कपालभाति और उज्जाई के मिश्रण से भस्त्रिका होता है।

कुछ लोग थकान होने तक अभ्यास चालू रखते हैं। इसके अभ्यास से पसीना खूब आयेगा। यदि थोड़ा-सा भी चक्कर-सा आने लगे, तो अभ्यास रोक कर सामान्य श्वास ले लें और फिर चक्कर ठीक होने पर अभ्यास चालू कर दें। शीतकाल में प्रातः और सायं दोनों समय भस्त्रिका किया जा सकता है। ग्रीष्मकाल में केवल प्रातःकाल ठण्ढे समय में ही करना चाहिए।

भस्त्रिका से गले की सूजन ठीक होती है, जठराग्नि बढ़ती और बलगम (Phlegm) नष्ट होता है। यह नाक और सीने के रोगों को दूर कर के दमा, क्षय आदि रोगों को समूलतः नष्ट करता है। यह क्षुधा को बढ़ाता और

ब्रह्म-ग्रन्थि, विष्णु-ग्रन्थि तथा रुद्र-ग्रन्थि-इन तीनों ग्रन्थियों को खोल देता है। सुषुम्ना अर्थात् ब्रह्म-नाड़ी के द्वार को बन्द रखने वाला बलगम भी भस्त्रिका के अभ्यास से नष्ट हो जाता है। वात, पित्त और कफ के बढ़ने से, जो रोग उत्पन्न होते हैं, वे सब भस्त्रिका के करने से दूर हो जाते हैं। इसके अभ्यास से शरीर में गरमी आती है। जब कभी किसी ठण्डे प्रदेश में पहुँच जायें और यदि शीत से रक्षा करने के लिए आपके पास कपड़े कम हों, तो भस्त्रिका का अभ्यास करें। शीघ्र ही आपके शरीर में गरमी आ जायेगी। भस्त्रिका के अभ्यास से नाड़ियाँ पर्याप्त शुद्ध हो जाती हैं। भस्त्रिका सभी कुम्भकों में अत्यधिक लाभप्रद है। भस्त्रिका-कुम्भक का विशेष रूप से अभ्यास करना चाहिए; क्योंकि इसके अभ्यास से सुषुम्ना में दृढ़तापूर्वक स्थित उपर्युक्त तीनों ग्रन्थियाँ खुल जाती हैं। भस्त्रिका के अभ्यास से कुण्डलिनी शीघ्र जाग जाती है। इसके अभ्यास करने वाले साधक को कभी भी कोई रोग नहीं होता है।

अभ्यासकर्त्ता की शक्ति एवं क्षमता के अनुसार ही भस्त्रिका में निश्वास-संख्या या चक्र-संख्या निश्चित की जाती है। अभ्यास करने में आपको अति नहीं बरतनी चाहिए। कुछ साधक ६ चक्र और कुछ १२ चक्र भी करते हैं। अभ्यास-काल में ॐ का भाव तथा अर्थ के साथ निरन्तर मानसिक जप करते रहना चाहिए। भस्त्रिका के कुछ प्रकार हैं, जिनमें श्वास के लिए केवल एक ही नासिका छिद्र का उपयोग किया जाता है।

जो पूरे समय के जिज्ञासु हैं और पूर्ण गम्भीरता से भस्त्रिका का अभ्यास करना चाहते हैं, उन्हें अभ्यास से पूर्व प्रातः वस्ति द्वारा पेट साफ कर लेना चाहिए। तभी उन्हें अभ्यास करना चाहिए और इसके बाद उन्हें केवल पर्याप्त घी-मिश्रित खिचड़ी का सेवन करना चाहिए।

(७) भ्रामरी

पद्मासन या सिद्धासन में बैठ कर दोनों नासारन्ध्रों से तीव्र गति से इस प्रकार श्वास-प्रश्वास लें कि भ्रमर के गुञ्जन जैसा शब्द हो।

जब तक आपका शरीर पसीने में तर न हो जाय, इस अभ्यास को आप चालू रखें । अन्त में दोनों नासारन्ध्रों से खूब गहरी श्वास लें और जितनी देर आराम से आप श्वास रोक सकते हों, रोकें । इसके बाद फिरश्वास को दोनों नासारन्ध्रों से धीरे-धीरे निकालें । इस कुम्भक को करने में साधक को जो आनन्द आता है, वह असीम और अवर्णनीय होता है । अभ्यास के आरम्भ में रक्त का सञ्चार बढ़ने से शरीर में गरमी बढ़ती है; किन्तु अन्त में शरीर की गरमी पसीना आने से कम हो जाती है । इस भ्रामरी-कुम्भक-प्राणायाम में सफलता प्राप्त कर योगी समाधि में सफल होता है ।

(८) मूर्च्छा

आसन लगा कर श्वास ग्रहण करें । श्वास को यथाशक्ति रोके रहें । ठोड़ी को सीने से सटा कर जालन्धर-बन्ध करें । श्वास को तब तक रोके रहें, जब तक कि मूर्च्छा आने जैसी आशङ्का उत्पन्न न होने लगे । जब मूर्च्छा आने लगे, तो धीरे-धीरे श्वास बाहर निकाल दें । यह मूर्च्छा-कुम्भक होता है; क्योंकि यह मस्तिष्क को संज्ञाहीन बना कर उसे आनन्द प्रदान करता है ।

(९) प्लाविनी

इस प्राणायाम के अभ्यास में साधक की ओर से चतुराई बरतने की आवश्यकता है । जो प्लाविनी-कुम्भक का अभ्यास कर सकता है वह जलस्तम्भ कर सकता है और यथेष्ट किसी समय तक पानी पर तैरता रह सकता है । इस कुम्भक के एक ऐसे अभ्यासकर्त्ता को हम जानते हैं, जो लगातार १२ घण्टे तक जल पर लेटे रह सकते हैं । जो लोग इस प्लाविनी-कुम्मक का अभ्यास करते हैं, वे कुछ दिनों तक बिना भोजन के रह कर वायु पर निर्वाह कर सकते हैं । इसमें साधक यथार्थ में पानी की भाँति वायु को पीता है और उसे

पेट में पहुँचाता है। वायु के भरने से पेट थोड़ा फूल जाता है। जब पेट वायु से भरा रहता है तब उसे अँगुली से बजाने पर नगाड़े का शब्द निकलता है। इसके लिए धीरे-धीरे अभ्यास करने की आवश्यकता है। जो लोग इस प्राणायाम का अभ्यास भली प्रकार से करना जानते हैं, उन लोगों से सहायता प्राप्त करना भी आवश्यक है। साधक पेट से सभी वायु को डकार के द्वारा अथवा उड्डीयान-बन्ध करके बाहर निकाल सकता है।

(१०) केवल कुम्भक

कुम्भक दो प्रकार के होते हैं—सहित कुम्भक और केवल कुम्भक। पूरक और रेचक के संयोग वाले कुम्भक को 'सहित कुम्भक' कहते हैं। जिस कुम्भक में ये दोनों क्रियाएँ नहीं होती हैं, उसे 'केवल कुम्भक' कहा जाता है। जब तक आप 'केवल कुम्भक' में पूर्णता प्राप्त नहीं कर लेते तब तक 'सहित कुम्भक' का अभ्यास करें।

'केवल कुम्भक' के अभ्यास से कुण्डलिनी का ज्ञान जाग्रत होता है। केवल कुम्भक में पूरक और रेचक के बिना ही श्वास को अचानक रोक दिया जाता है। इस कुम्भक के द्वारा साधक स्वेच्छानुसार देर तक अपने श्वास को रोक सकता है। वह राजयोग की अवस्था प्राप्त करता है। केवल कुम्भक द्वारा कुण्डलिनी जाग्रत की जाती है तथा सुषुम्ना सब प्रकार की बाधाओं से मुक्त हो जाती है। इससे साधक हठयोग के अभ्यास में पूर्ण हो जाता है। इससे सब प्रकार के रोग नष्ट हो जाते हैं और साधक की आयु दीर्घ होती है।

आप इस कुम्भक को दिन में आठ बार, प्रत्येक तीन घण्टे में एक बार अथवा दिन में पाँच बार जिसमें एक बार प्रातः, एक दोपहर को, एक सायं, एक अर्ध रात्रि और फिर एक रात्रि के चौथे प्रहर में कर सकते हैं। अथवा आप इसे दिन में तीन बार भी अर्थात् प्रातः, सायं और रात्रि में कर सकते हैं।

जो केवल कुम्भक का ज्ञानरखता है, वह वास्तविक योगी है। जिसने केवल कुम्भक में सिद्धि प्राप्त कर ली वह तीनों लोकों में क्या नहीं प्राप्त कर सकता है ! ऐसे सिद्ध महात्माओं को धन्य है ! धन्य है ! उनका आशीर्वाद सब साधकों को प्राप्त हो !

प्राणायाम के लाभ

प्राणायाम से शरीर शक्तिशाली तथा स्वस्थ हो जाता है, शरीर की अत्यधिकचर्बी कम हो जाती है, चेहरा कान्तिमान प्रतीत होने लगता है, नेत्र हीरे की भाँति चमकने लगते हैं तथा साधक बड़ा सुन्दर दिखायी देने लगता है। उसकी वाणी मधुर और सुरीली हो जाती है। उसे अन्तर-नाद(अनहद-शब्द)स्पष्टता से सुनायी देने लगते है। इस साधना का साधक समस्त रोगों से मुक्त हो जाता है। वह पूर्ण रूप से ब्रह्मचर्य में स्थित हो जाता है। रजोगुण और तमोगुण दूर हो जाते हैं। मन ध्यान के लिए तैयार हो जाता है। मल-त्याग में कमी हो जाती है।

प्राणायाम के निरन्तर अभ्यास से आन्तरिक आध्यात्मिक शक्ति जाग्रत होती है और इससे परम आनन्द, दिव्य प्रकाश और मानसिक शान्ति प्राप्त होती है। साधक ब्रह्मचर्य में इतना दृढ़ हो जाता है कि अप्सरा भी उसे प्रलोभित नहीं कर सकती। यह उसे ऊर्ध्वरेता योगी बना देता है। साधना में आगे बढ़ने पर योगी अणिमा, महिमा, गरिमा आदि मुख्य अष्ट सिद्धियों और ३६ लघु प्रकार की सिद्धियों को प्राप्त कर लेता है।

यदि आप ब्रह्मचर्य की रक्षा एवं आहार-संयम के बिना, दीर्घ काल तक भी आसन-प्राणायाम करते रहें तो भी अधिक लाभ नहीं होगा। साधारण स्वास्थ्य के लिए आप थोड़ा-सा प्राणायाम कर सकते हैं।

प्राणायाम-सम्बन्धी निर्देश

(१) शुष्क एवं हवादार कमरे में प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। अभ्यास के समय कमरे में अकेले ही रहना उचित है।

(२) प्रातः ४ बजे उठ कर आधा घण्टा जप करें और फिर आसन करें। इसके बाद २० से ३० मिनट तक विश्राम करें और फिर शारीरिक व्यायाम करें। फिर थोड़ा विश्राम ले कर प्राणायाम का अभ्यास करें। शारीरिक व्यायाम आसनों के साथ किये जा सकते हैं। प्रातः और सायं दोनों समय अभ्यास करें। जप या ध्यान के लिए बैठने से ठीक पूर्व प्राणायाम का अभ्यास किया जा सकता है। इससे आपका शरीर हलका होगा और आपको ध्यान के अभ्यास में आनन्द प्राप्त होगा।

(३) पेट भारी होने पर प्राणायाम नहीं करना चाहिए। अभ्यास के समय पेट खाली अथवा हलका होना चाहिए। अभ्यास के १० मिनट बाद एक प्याला दूध ले लेना चाहिए।

(४) सात्त्विक भोजन जैसे दूध, फल, साग, मूगनी, पराठा, लौकी आदि का सेवन करें। चरपरी कढ़ी, चटनियाँ, अचार, मिर्च, तेल, प्याज, लहसुन, माँस, मछली, मदिरा धूमपान आदि का सेवन छोड़ दें।

(५) अभ्यास में नियमित और व्यवस्थित रहें। किसी भी दिन नागा मत करें।

(६) प्राणायाम के तुरन्त बाद स्नान न करें, आधा घण्टा विश्राम कर लें।

(७) पसीना आने पर तौलिये से मत पोंछें, अपने हाथों से रगड़ें। पसीना आने पर शरीर को ठण्ढ तथा वायु के झोंके से बचा कर रखें।

(८) ग्रीष्म काल में केवल प्रातःकाल ही अभ्यास करें। यदि दिमाग या शिर में गरमी प्रतीत हो तो स्नान से पूर्व आँवले का तेल या मक्खन शरवत शिर पर मल लें। जल में चीनी या मिश्री घोल कर बना कर पियें। इससे आपके सम्पूर्ण शरीर को तरावट मिलेगी।

(९) शीतली प्राणायाम भी करें। इससे आपके ऊपर गरमी का किसी प्रकार का प्रभाव नहीं होगा।

(१०) ६ महीने अथवा १ वर्ष तक ब्रह्मचर्य-व्रत का पूर्णतया पालन करें। इससे निश्चय ही आप अभ्यास में प्रगति करेंगे, साथ ही आध्यात्मिक विकास भी होगा। महिलाओं से बातचीत मत करें, उनसे हँसी-मजाक भी मत करें। कम-से-कम साधना-काल में उनका साथ विलकुल त्याग दें।

(११) श्वासोच्छ्वास सदैव बहुत धीरे-धीरे करें। श्वास-प्रश्वास के समय कोई शब्द मत करें। कपालभाति और भस्त्रिका में जोर से शब्द मत करें।

(१२) थकान की हालत में प्राणायाम मत करें। अभ्यास-काल में और उसके अन्त में भी सदैव आनन्द और सुखानुभूति होनी चाहिए। अभ्यास के बाद आपमें पूर्ण स्फूर्त्ति और ताजगी होनी चाहिए। अपने को अत्यधिक नियमों से बद्ध मत रखें।

(१३) अत्यधिक बातें करने, खाने, सोने, मित्रों से सम्पर्क रखने तथा श्रम करने से पूर्णतया बचते रहें।

(१४) शनैः शनैः कुम्भक की अवधि को बढ़ाते जायें। प्रथम सप्ताह में चार सेकण्ड तक, दूसरे सप्ताह में आठ सेकण्ड तक और तीसरे सप्ताह में वारह सेकण्ड तक रखें और इसी प्रकार जब तक कि आप श्वास को ६४ सेकण्ड तक न रोक सकें इसी प्रकार अवधि को बढ़ाते जायें।

(१५) पूरक, कुम्भक और रेचक करते समय ॐ अथवा गायत्री का मानसिक जप करते रहें। ऐसा भाव रखें के अन्दर श्वास लेते समय दया, क्षमा, प्रेम आदि समस्त देवी सम्पत्तियाँ प्रवेश कर रही हैं और श्वास के साथ लोभ, क्रोध, मोह आदि आसुरी शक्तियाँ बाहर निकल रही हैं। श्वास लेते समय यह भी अनुभव करें कि दिव्य स्रोत विश्व-प्राण से आपको शक्ति प्राप्त हो रही है और आपादमस्तक आपका सारा शरीर नवीन शक्ति से निमज्जित्त हो रहा है। जब शरीर अधिक रोगी हो तो अभ्यास बन्द कर दें।

(१६) नये सीखने वाले साधक को कुछ दिनों तक बिना कुम्भक के ही पूरक तथा रेचक करना चाहिए।

(१७) आप पूरक, कुम्भक और रेचक को इस प्रकार से करें कि प्राणायाम की किसी स्थिति में भी आपको दम घुटने जैसी अथवा कष्ट की अनुभूति न हो।

(१८) प्रश्वास (रेचक) की अवधि अनावश्यक रूप से नहीं बढ़ानी चाहिए। यदि आप रेचक का समय बढ़ायेंगे तो उसके बाद श्वास शीघ्रता से लेनी होगी और प्रवाह टूट जायेगा।

(१९) पूरक, कुम्भक और रेचक इस प्रकार सावधानी से करें कि आप न केवल एक प्राणायाम बल्कि पूर्ण आवश्यक क्रम पूर्ण सुविधा से सुचारु रूप से कर सकें। इसे आपको प्रायः दोहराना होगा। अनुभव और अभ्यास से आप ठीक हो जायेंगे, नियमित बने रहें।

(२०) प्राणायामों के दो निरन्तर चक्रों के बीच में आपको कुछ सामान्य श्वास लेने की आवश्यकता कभी अनुभव नहीं होनी चाहिए। पूरक, कुम्भक और रेचक की अवधि समुचित रूप से रखनी चाहिए।

उचित सावधानी और ध्यान से काम लेना चाहिए। तब साधना सफल और सरल हो जायगी।

(२१) अन्य महत्त्वपूर्ण बात ध्यान देने योग्य यह है कि कुम्भक के अन्त में आपको फेफड़ों पर सुचारु रूप से नियन्त्रण रखना चाहिए जिससे कि आप रेचक सरलता से और पूरक अनुपात से कर सकें।

(२२) पूरक, कुम्भक और रेचक का अनुपात क्रमशः १ : ४ : २ होना चाहिए। एक ॐ उच्चारण करने तक श्वास लें और चार ॐ उच्चारण करने तक श्वास को रोकें और दो ॐ उच्चारण करने तक श्वास को निकालें। प्रति सप्ताह यह अनुपात २ : ८ : ४, ३ : १२ : ६ के क्रम में उस समय तक बढ़ाते जाये जब तक कि अनुपात १६ : ६४ : ३२ न हो जाये। ॐ की गिनती अपने बायें हाथ की अँगुलियों पर करें। जब आप यथाशक्ति श्वास लेते, रोकते और निकालते हैं तो यह अनुपात स्वतः बन जाता है। जब आपका अभ्यास बढ़ जाये तो गिनती करने की आवश्यकता नहीं है। अभ्यास के द्वारा आपका सहज अनुपात स्वतः ही होने लगेगा।

(२३) आरम्भ में साधारण भूलें हो सकती हैं। कोई बात नहीं। इससे व्यर्थ भय मत करें। अभ्यास मत छोड़ें, आप स्वयं पूरक, कुम्भक और रेचक की तीन प्रक्रियाओं को भली प्रकार करना सीख जायेंगे। इस मार्ग में आपको सामान्य बुद्धि, सहज वृत्ति और आत्मा की तीव्र आन्तर्वाणी सहायता देगी। अन्त में प्रत्येक कार्य ठीक हो जायेगा। इसी क्षण दृढ़ गम्भीरतापूर्वक अभ्यास आरम्भ कर दें। आप यथार्थ योगी बन जायेंगे। प्रयत्न करें, कठोर सङ्घर्ष करें और लक्ष्य को प्राप्त करें।

(२४) सूर्यभेद और उज्जाई गरमी उत्पन्न करते हैं । शीतकारी और शीतली शीतलता प्रदान करते हैं । भस्त्रिका सामान्य तापमान को बनाये रखता है। सूर्यभेद से वात की, उज्जाई से कफ की और शीतकारी से पित्त की तथा भस्त्रिका से तीनों की अधिकता नष्ट होती है ।

(२५) सूर्यभेद और उज्जाई का शीतकाल में, शीतकारी और शीतली का ग्रीष्मकाल में तथा भस्त्रिका का सभी ऋतुओं में अभ्यास किया जा सकता है । जिन लोगों के शरीर शीतकाल में भी गरम रहते हैं वे शीतकाल में शीतली और शीतकारी का अभ्यास कर सकते हैं ।

टिप्पणी—आसनों के लिए दिये गये बहुत से निर्देशनों का पालन प्राणायाम में भी किया जाना चाहिए ।

योग-परिशिष्ट

कुण्डलिनी

कुण्डलिनी एक सर्पाकार दिव्य शक्ति है जो कि समस्त प्राणियों में सुषुप्तावस्था में पड़ी रहती है। गुदा से दो अंगुल ऊपर तथा जननेन्द्रिय से दो अंगुल नीचे मूलाधार-चक्र होता है। यहीं पर महादेवी कुण्डलिनी अवस्थित है। यह सर्प की तरह साढ़े तीन बल खाये हुए होती है। इसलिए इसका नाम 'सर्प-शक्ति' रखा गया है। यह सुषुम्ना-नाड़ी के मुँह में मुँह नीचे किये हुए रहती है। यह संसार की सृजन-शक्ति को अभिव्यक्त करती है तथा सृजन-कार्य में सदा व्यस्त रहती है। तीन कुण्डलियाँ प्रकृति के तीन गुणों अर्थात् सत, रज, और तम को अभिव्यक्त करती हैं। इसमें अर्द्ध कुण्डली विकृतियों को (जो कि प्रकृति के विकार हैं) अभिव्यक्त करती है। कुण्डलिनी-शक्ति के जाग्रत होने तथा उसके सहस्रार-चक्र में शिव से मिलने से समाधि एवं मोक्ष की अवस्था प्राप्त होती है। इससे योगी ८ मुख्य एवं ३२ गौण सिद्धियाँ प्राप्त कर सकता है और मनोवाञ्छित काल तक जीवित रह सकता है।

इडा, पिङ्गला, सुषुम्ना, एवं षट्-चक्र

इडा और पिङ्गला नाड़ियाँ मेरुदण्ड को पार कर एक तरफ से दूसरी तरफ जाती हैं और सुषुम्ना के साथ त्रिबन्ध, जिसे त्रिवेणी कहते हैं, बनाती हैं।

इडा नासिका के बायें रन्ध्र से तथा पिङ्गला नासिका के दायें रन्ध्र से चलती है। सुषुम्ना सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण नाड़ी है। यह ब्रह्मनाड़ी के नाम से भी प्रसिद्ध है। यह एक सुन्दर मार्ग है जो कि नीचे मूलाधार से मेरु-रज्जु के मध्य से निकलती है और ब्रह्मरन्ध्र तक जाती है। जब नियमित प्राणायामों

के द्वारा चक्र शुद्ध हो जाते हैं तो श्वास स्वतः सुषुम्ना-नाड़ी के मुँह में बल-पूर्वक प्रवेश करता है। जब श्वास सुषुम्ना-नाड़ी में हो कर निकलता है तो मन स्थिर हो जाता है।

टिप्पणी—नाड़ियों और चक्रों के कार्यों तथा उनसे सम्बन्धित निर्देशों के लिए देखिए मेरी पुस्तक 'कुण्डलिनी-योग'।

अभ्यास-क्रम एवं दिनचर्या

व्यस्त लोगों के लिए प्रारम्भिक अभ्यास-क्रम 'क'

	घं० मि०	कब से	कब तक
जप-ध्यान	०—४५	प्रातः ४—००	४—४५
शीर्षासन	०—०५		
सर्वाङ्गासन	०—०५		
मत्स्यासन	०—०३		
पश्चिमोत्तानासन	०—०५	,, ४—४५	५—१०
अन्य आसन	०—०५		
शवासन	०—०२		
विश्राम	०—१५	,, ५—१०	५—२५
भस्त्रिका तथा अन्य प्राणायाम	०—१०	,, ५—२५	५—३५
विश्राम	०—०५	,, ५—३५	५—४०
स्वाध्याय	०—४५	,, ५—४०	६—२५
प्रातःकालीन भ्रमण	०—३५	,, ६—२५	७—००
आसन, प्राणायाम, जप और ध्यान (विलोम क्रम)	१—३०	सायं ६—१५	७—४५
भजन (कीर्त्तन)	०—३०	,, ७—४५	८—१५
भोजन तथा विश्राम	०—१५	रात्रि ८—१५	८—३०
अध्ययन	१—००	,, ८—३०	९—३०
शयन	६—००	,, ९—३०	३—३०

व्यस्त लोगों के लिए उच्चतर अभ्यास-क्रम 'ख'

	घं. मि.	कब से	कब तक
जप तथा ध्यान	१-३०	प्रातः ३-३०	५-००
शीर्षासन	०-३०	,, ५-००	५-३०
सर्वाङ्गासन, पश्चिमोत्तानासन, मयूरासन इत्यादि	०-३०	,, ५-३०	६-००
भस्त्रिका तथा अन्य प्राणायाम	०-३०	सायं ६-००	६-३०
स्वाध्याय	०-३०	,, ६-३०	७-००
आसन, प्राणायाम, जप और ध्यान	३-००	रात्रि ६-१५	९-१५
भोजन	०-१५	,, ९-१५	९-३०
स्वाध्याय	०-३०	,, ९-३०	१०-००
शयन	५-००	,, १०-००	३-००

पूर्णकालिक साधकों के लिए अभ्यास-क्रम 'ग'

जप और ध्यान	३-३०	प्रातः ३-३०	७-००
आसन और प्राणायाम	२-००	,, ७-००	९-००
आसन और प्राणायाम	२-००	सायं ५-००	७-००
जप और ध्यान	२-००	रात्रि ७-००	९-००
भजन	१-००	,, ९-००	१०-००
शयन	५-००	,, १०-००	३-००

अभ्यास-क्रम 'क' और 'ख' के लोगों के लिए सामान्य कार्यक्रम

	घं. मि.	कब से	कब तक
विश्राम, अल्पाहार या दुग्ध	०-१५	प्रातः ७-००	७-१५
निष्काम कर्म और गृह-कार्य	१-१५	,, ७-१५	८-३०
स्नान, सफाई तथा अल्पाहार आदि	१-००	,, ८-३०	९-३०
कार्यालय	३-००	पूर्वाह्न १०-००	१-००
भोजन, मिलने का समय, पत्रादि लिखना	१-००	अपराह्न १-००	२-००
कार्यालय	३-००	,, २-००	५-००
सायङ्कालीन भोजन और विश्राम	०-१५	सायं ५-००	५-१५
सायङ्कालीन भ्रमण २ मील, सत्सङ्ग-श्रवण	१-००	,, ५-१५	६-१५

अन्य समय मौन, निष्काम कर्म, कीर्त्तन, स्वाध्याय, स्नान, भोजन आदि के लिए भली प्रकार निर्धारित कर लेना चाहिए। साधकों को अपने विकास, क्षमता और सुविधा के अनुसार अपना कार्यक्रम निश्चित कर लेना चाहिए।

आवश्यक निर्देश

(१) योग के प्रत्येक जिज्ञासु का एक ही अभ्यास-क्रम होना चाहिए। आप समय में इधर-उधर थोड़ा हेर-फेर कर सकते हैं; किन्तु उसमें कार्यक्रम का प्रत्येक विषय रहना चाहिए। आध्यात्मिक मार्ग में वेदान्तिक चर्चा करने मात्र से काम नहीं चलेगा। नियमितता बरतने में आपको दृढ़ होना पड़ेगा और किसी भी मूल्य पर कार्यक्रम के प्रत्येक विषय का पालन किया जाना चाहिए। ध्यान, जप, आसन तथा प्राणायाम का निर्धारित समय धीरे-धीरे बढ़ा देना चाहिए।

(२) सो कर उठते ही सर्वप्रथम शौच जायें। यदि आप स्नान न कर सकें तो हाथ-पैर, मुँह तथा शिर धो कर ध्यान और योगाभ्यास के लिए बैठ जायें।

(३) कुछ दिनों के नियमित अभ्यास के बाद यदि आप आसन, प्राणायाम और ध्यान का समय बढ़ा देते हैं, तो आपको गृह-कर्त्तव्यों और प्रातःकालीन भ्रमण के लिए निर्धारित समय में से कुछ समय कम करना होगा। छुट्टियों (अवकाश) के दिन आध्यात्मिक अभ्यास के लिए अधिक समय का उपयोग करना चाहिए।

(४) प्रातःकालीन स्वाध्याय के समय गीता उपनिषद्, रामायण आदि पढ़ें और रात्रि के समय अध्ययन-काल में कोई अन्य दर्शन-सम्बन्धी पुस्तकें अथवा पत्रिकाएँ पढ़ सकतें हैं। ये दोनों विषय विद्यार्थियों के विस्तृत तथा अ-विस्तृत पाठ्यक्रम की भाँति हैं। मिलने-भेंट करने तथा पत्र लिखने के समय आप कु छ रुचिकर पुस्तकें पढ़ने में लगा सकते हैं।

५. सायङ्काल में आप कुछ अन्य शारीरिक व्यायाम एवं प्राणायाम भी

पुस्तक में आये हुए योगासनों की वर्णानुक्रमिका

अधिक प्रचलित आसनों की विस्तृत सूची

१. अंगुष्ठासन
२. अध्वासन!
३. अर्ध कूमार्सन
४. अर्ध चन्द्रासन
५. अर्ध नावासन
६. अर्ध पद्मासम
७. अर्ध पादासन
८. अर्ध मत्स्येन्द्रासन
९. अर्ध वृक्षासन
१०. अर्ध शवासन
११. आकर्षण धनुरासन
१२. आनन्द मन्दिरासन
१३. उग्रासन
१४. उत्कटासन
१५. उत्तमाङ्गासन
१६. उत्तान कूर्मासन
१७. उत्तान पादासन
१८. उत्तान मण्डूकासन
१९. उत्थित पद्मासन
२०. उत्थित पार्श्वकोणासन
२१. उत्थित विवेकासन
२२. उपविष्ट कोणासन
२३. उष्ट्रासन
२४ ऊर्ध्व-धनुरासन
२५. ऊर्ध्व-पद्मासन
२६. ऊर्ध्व-पादासन
२७. एकपाद-वृक्षासन
२८. एकपादासन
२९. एकहस्त-भुजासन
३०. कन्दपीडासन
३१. कपाल्यासन
३२. कपिलासन
३३. कर्णपीडासन
३४. कश्यपासन
३५. कार्मुकासन
३६. कुक्कुटासन
३७. कूर्मासन
३८. कोकिलासन
३९. क्षेमासन
४०. गण्डभेरुण्डासन
४१. गरुड़ासन
४२. गर्भासन

४३. गुप्तासन
४४. गोमुखासन
४५. गोरक्षासन
४६. चकोरासन
४७. चक्रासन
४८. चतुष्पादासन
४९. जानुशीर्षासन
५०. जान्वासन
५१. टिट्टिभासन
५२. ताड़ासन
५३. तोलांगुलासन
५४. त्रिकोणासन
५५. दण्डासन
५६. दक्षिण-जान्वासन
५७. दक्षिण-पवनमुक्तासन
५८. दुर्वासासन
५९. द्विपाद-शीर्षासन
६०. धनुरासन
६१ नटराजासन
६२. नावासन
६३. निरालम्ब शीर्षासन
६४. पद्म-मयूरासन
६५. पद्मासन
६६. पर्यङ्कासन
६७. पर्वतासन
६८. पवन-मुक्तासन
६९. पश्चिमोत्तानासन
७०. पाद हस्तासन
७१ पादांगुष्ठासन
७२. पादादिरासन
७३. पूर्णपादासन
७४. पूर्वोत्तानासन
७५. प्रसारित पादोत्तानासन
७६. प्राणासन
७७. बकासन
७८. बद्ध-पद्मासन
७९. बद्ध योनि-आसन
८०. भद्रासन
८१. भुजङ्गासन
८२. भैरवासन
८३. मण्डूकासन
८४. मकरासन
८५. मत्स्यासन
८६. मत्स्येन्द्रासन
८७. मयूरासन
८८. मरीच्यासन
८९. मुक्तासन
९०. मृतासन
९१. यष्टिकासन
९२. योगदण्डासन

९३.	योगनिद्रासन	१११.	समानासन
९४.	योगासन	११२.	सर्वाङ्गासन
९५.	योनि-आसन	११३.	सालम्ब शीर्षासन
९६.	लोलासन	११४.	साष्टाङ्गासन
९७.	वज्रासन	११५.	सिंहासन
९८.	वातायनासन	११६.	सिद्धासन
९९.	वामजान्वासन	११७.	सुखासन
१००.	वामन-आसन	११८.	सुप्त-कोणासन
१०१.	वाम-पवनमुक्तासन	११९.	सुप्त-पादांगुष्ठासन
१०२.	विपरीतकरणी-मुद्रा	१२०.	सुप्त वज्रासन
१०३.	विस्तृत पाद पार्श्व-भूनमस्कारासन	१२१.	स्कन्दासन
१०४.	वीरासन	१२२.	स्थिरासन
१०५.	वृक्षासन	१२३.	स्वस्तिकासन
१०६.	वृश्चिकासन	१२४.	हंसासन
१०७.	शलभासन	१२५.	हनुमानासन
१०८.	शवासन	१२६.	हलासन
१०९.	शीर्षासन	१२७.	हस्त भुजासन
११०.	सङ्कटासन	१२८.	हस्त वृक्षासन

शिवानन्दाश्रम का दैनिक कार्यक्रम तथा सेवा का नित्यक्रम

दिव्य जीवन सङ्घ के प्रमुखालय आश्रम में व्यक्तिगत तथा सर्वसामान्य के हित और समृद्धि के लिए परम्परागत रीति से निर्दिष्ट प्रार्थनाओं के साथ दिन प्रारम्भ होता है । प्रार्थना के साथ ध्यान भी संलग्न रहता है। ४.३० से ६ बजे तक के इस प्रातःकालीन कार्यक्रम के पश्चात् मन्दिर में पूजा होती है तथा ६ से ७ बजे तक योगासन के वर्ग चलते हैं । योग तथा वेदान्त के विभिन्न विषयों तथा सामान्य आध्यात्मिक साधना के प्रशिक्षण के दैनिक वर्ग प्रातः ७ से ८ बजे तक और योगासन-वर्ग सायङ्काल को ४ से ५ बजे तक चलते हैं। आश्रम के ध्यान-महाकक्ष में सायङ्काल के ६ बजे से ७ बजे तक ध्यान का दैनिक वर्ग चलता है। रात्रि में ७.३० से ९.३० तक होने वाला सत्सङ्ग सार्वजनिक है और इसमें सङ्कीर्त्तन, भजन, प्रवचन आदि जैसे आध्यात्मिक उपगमन के सामान्य विषयों का तथा तात्कालिक स्थिति की माँग के अनुकूल कतिपय परिवर्त्तनीय विषयों का समावेश होता है ।

आश्रम के स्थायी निवासियों के लिए इन नियमित वर्गों में सम्मिलित होने के अतिरिक्त संस्था के मुद्रणालय, प्रकाशन, औषधि-निर्माण, चिकित्सालय, अन्नक्षेत्र, स्वागत, महामन्त्र का अखण्ड कीर्त्तन, मन्दिर-पूजा, पुस्तकालय, पत्रिका-वितरण उपविभाग, शाखा तथा सदस्यता उपविभाग, निःशुल्क साहित्य, गोशाला तथा कृषि, लेखा, डाक-प्रेषण आदि जैसे विभिन्न सेवाविभागों में अपने निर्दिष्ट कार्य होते हैं । आश्रमवासी इन सेवाओं में प्रतिदिन कई घण्टे कार्य करते हैं ।

एक महत्त्वपूर्ण कार्य जो परमाध्यक्ष श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज मुख्य रूप से करते हैं वह है जिज्ञासुओं तथा सामान्य जनता में जीवन के उच्चतर ज्ञान के प्रसार के लिए देश के विभिन्न भागों में और कभी-कभी विदेश में सांस्कृतिक यात्राओं का कार्य ।

संस्था अपनी प्रबन्धकीय प्रास्थिति में जो अन्य सेवाएँ करती है वे हैं : विद्यार्थियों की उनके अध्ययन चालू रखने में सहायता करना, वास्तविक आवश्यकता के अवसरों पर अपेक्षित रूप से दान देना, हिमालय के तीर्थ-स्थानों की यात्रा करने वाले निर्धन तीर्थयात्रियों को आवश्यक प्राणिक सुविधाएँ दान के रूप में यथावश्यक सहायता करना । इस क्षेत्र के कुष्टरोगियों के सहायता-कार्य में परमाध्यक्ष स्वामी जी जो गहन रुचि ले रहे है, वह सर्वविदित है ।

संस्थापक परम पावन श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज का यह महान् सेवाश्रम मानव-जीवन के शारीरिक, मनोवैज्ञानिक, बौद्धिक, नैतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक क्षेत्रों में मूल्यों के पुनरुत्थान पर बल देता है । श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज की रचनाएँ उनके जीवन-काल से ही भव्यतर विचार तथा उच्चतर जीवन यापन के लिए प्रभावशाली प्रोत्साहन का कार्य करती रही हैं ।

श्री गुरुदेव का यह आदर्श-वाक्य 'ईश्वर सर्वप्रथम, संसार उनके अनन्तर और स्वयं व्यक्ति सबसे अन्त में' वैयक्तिकता से समाज के विशालतर विश्व की, तथा विश्व से विराट् पुरुष की वैश्व सत्ता की दिशा में प्रगति करने में आदर्श मानव-आचरण की विधियों का कदाचित् समाहार प्रस्तुत करता है ।

●

योग-वेदान्त

(हिन्दी मासिक पत्र)

संस्थापक—श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

सम्पादक— श्री स्वामी चन्द्रशेखरानन्द सरस्वती

वार्षिक चन्दा : ७ रुपये

यह पत्र शिवानन्द-साहित्य का अनमोल रत्न है । 'योग-वेदान्त-आरण्य-विद्यापीठ' का मुख-पत्र होने से इसमें सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, धार्मिक, योग और वेदान्त-विषयक सुबोधगम्य सामग्री रहती है ।

योग के जटिल अर्थ साधारण जनसमाज में सरल रीतियों से समझाने के लिए यह उत्तम माध्यम है । अपने पवित्र विचारों को ले कर यह पत्र नवीन आध्यात्मिक युग की शङ्ख-ध्वनि प्रघोषित करता है ।

इस पत्र में सर्वसाधारण के लेखों को प्रकाशित नहीं किया जाता है ; किन्तु अनुभव के आधार पर जो लेख लिखे गये हों और जिनके विचारों की पृष्ठभूमि ठोस और प्रामाणिक हो, ऐसे लेखों को ही इस पत्र में प्रकाशित किया जाता है । जीवनोपयोगी व्यावहारिक सिद्धान्त को प्रकट करने वाले लेख पत्र में अवश्य प्रकाशित किये जाते हैं ।

यह पत्र किसी सम्प्रदाय-विशेष का प्रतिनिधित्व नहीं करता ; किन्तु विश्वात्म-भावना के उद्देश्य को अङ्गीकार कर, केवल उसी सिद्धान्त का हर रीति से प्रतिपादन करता है ।

योग-वेदान्त,
दिव्य जीवन सङ्घ,
पत्रालय शिवानन्दनगर—२४६ १९२,
जिला टिहरी-गढ़वाल (उ. प्र.), भारत ।

योगासन

(सचित्र)
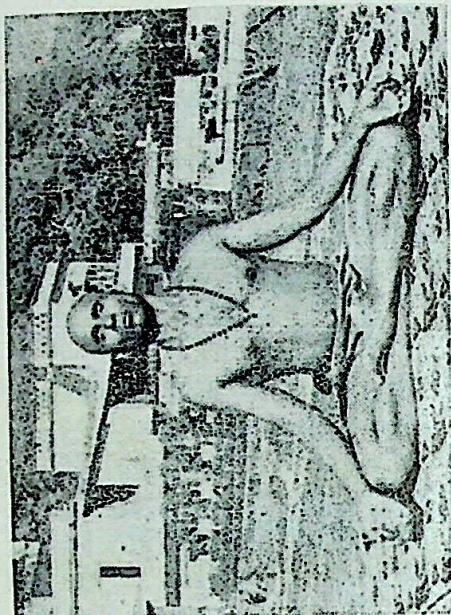
पद्मासन (पृ० ४)

सिद्धासन (पृ० ६)
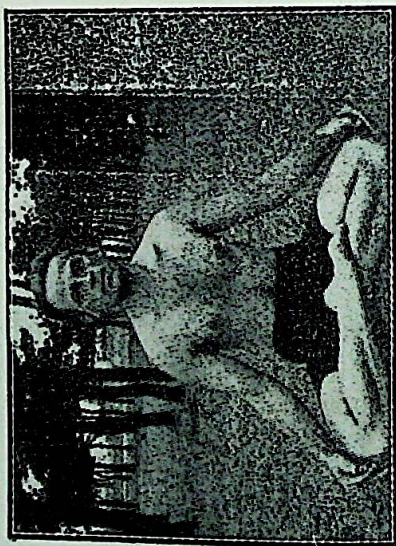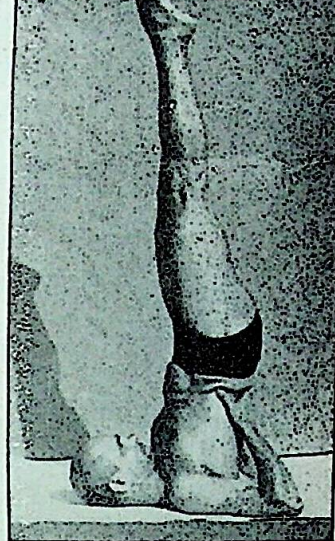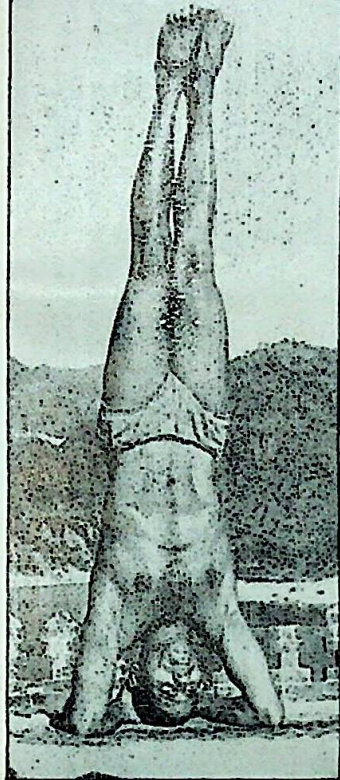
सर्वाङ्गासन (पृ० १५)

[शीर्षासन] (पृ० ११)
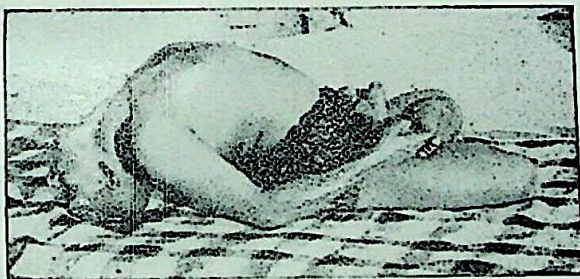
मत्स्यासन (पृ० २०)
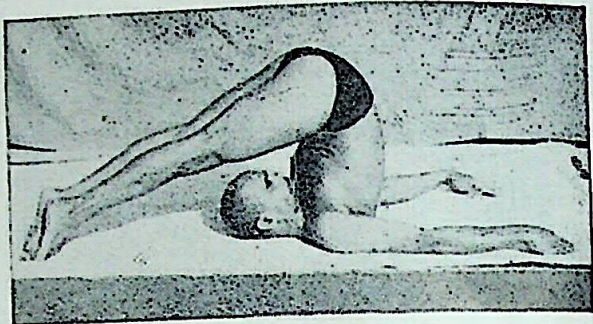
हलासन (पृ० १८)
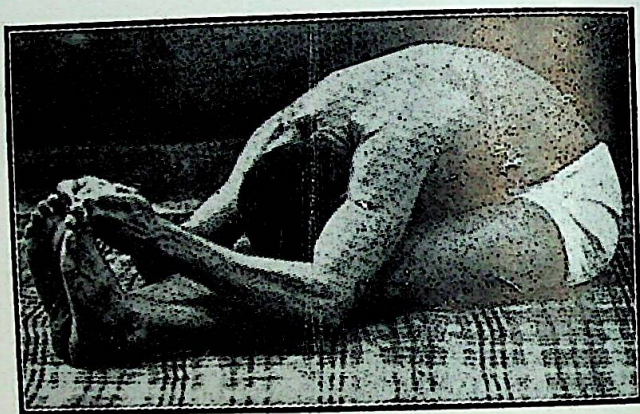
पश्चिमोत्तानासन (पृ० २२)
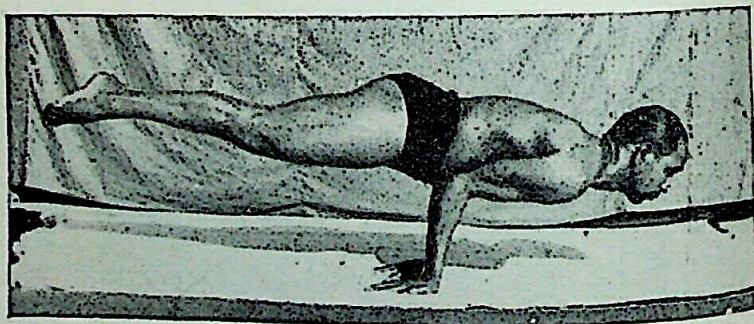
मयूरासन (पृ० २४)
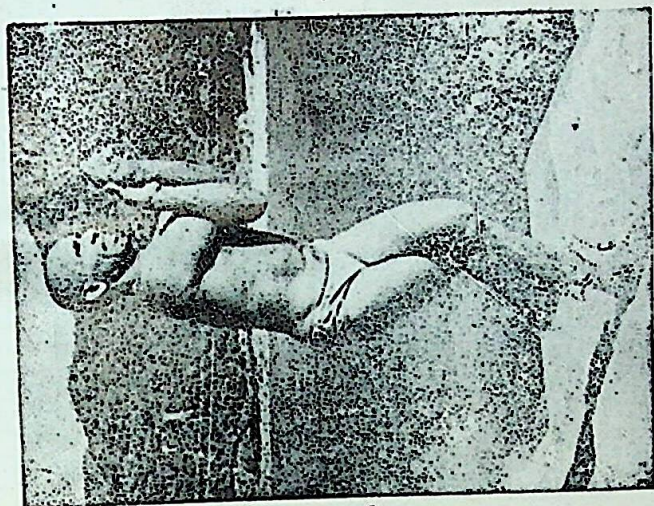
उत्थित पद्मासन (पृ० ६)

गरुड़ासन (पृ० ४०)
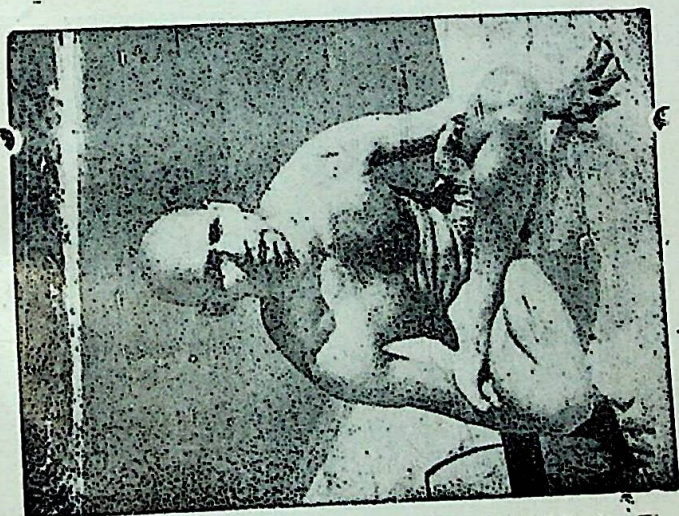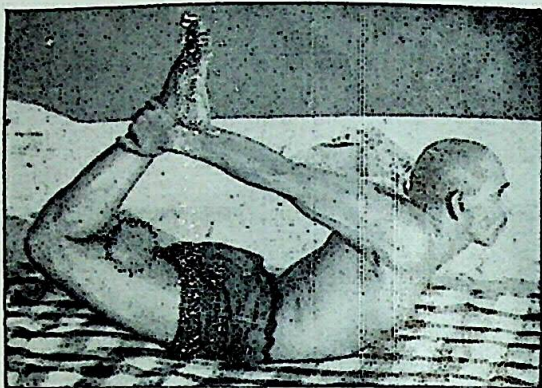
धनुरासन (पृ० ३३)
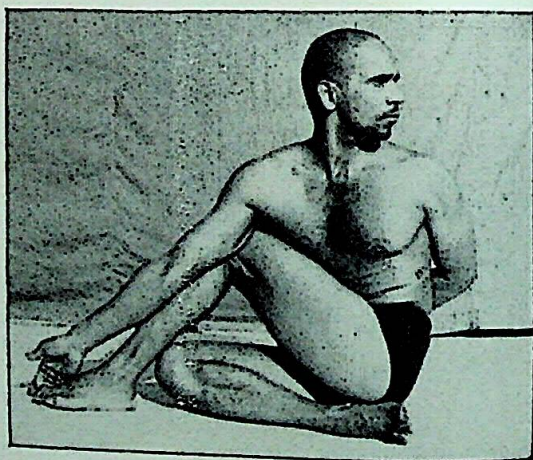
अर्द्ध मत्स्येन्द्रासन (पृ० २७)
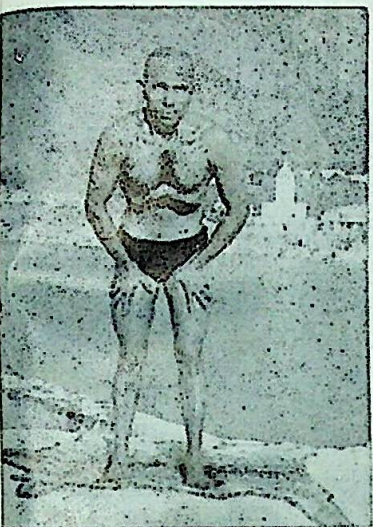
उड्डीयानबन्ध (पृ० ९३)
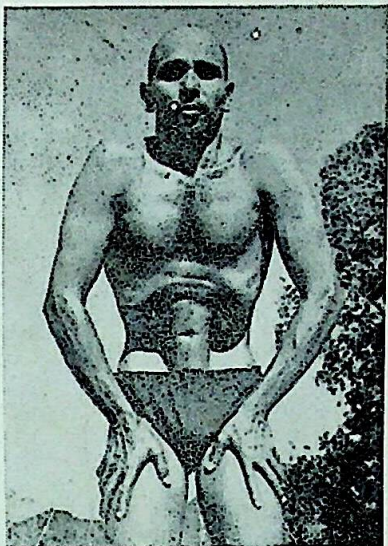
नौलि (पृ० ९४)
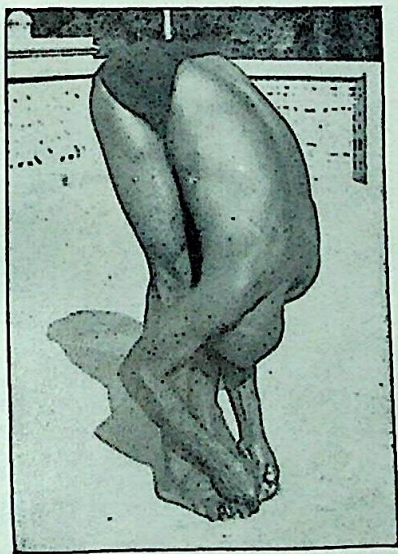
पादहस्तासन (पृ० ४८)

गोमुखासन (पृ० ३५)
(पृष्ठ भाग)

गोमुखासन (पृ० ३५)
(पार्श्व भाग)

वज्रासन (पृ० ७)

योग दन्डासन
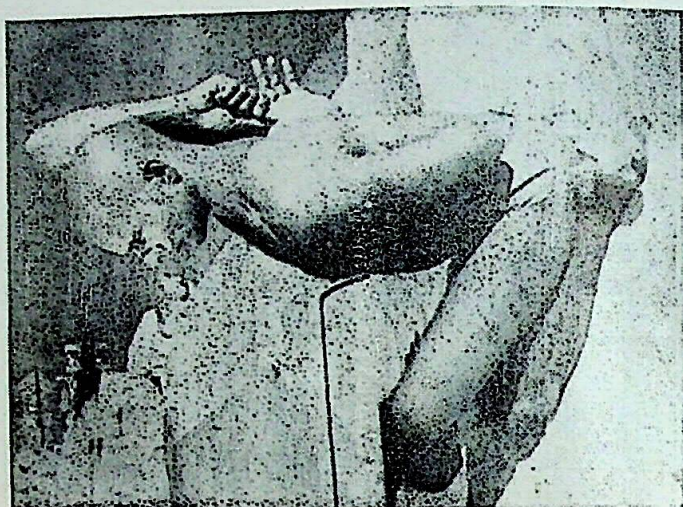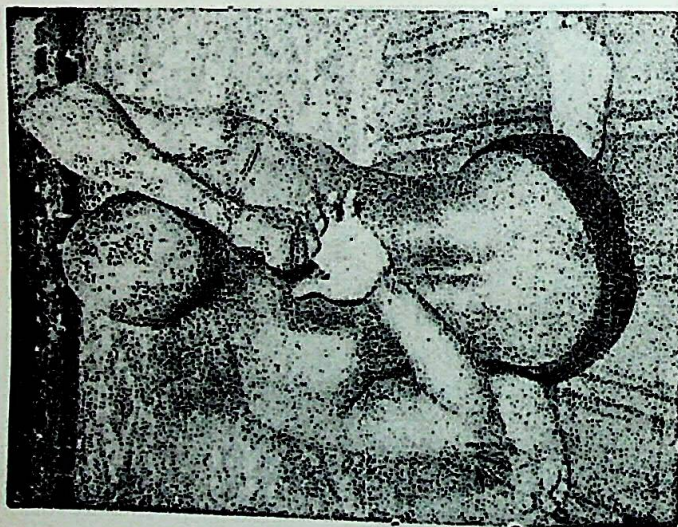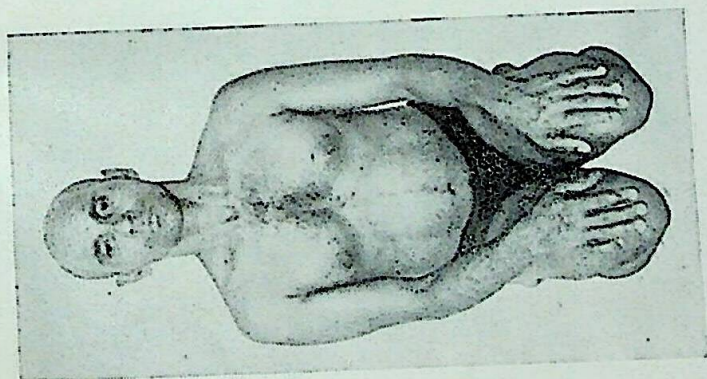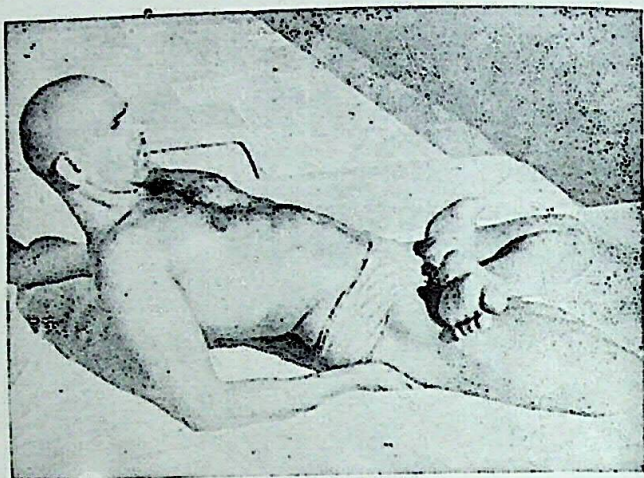
तुलांगुलासन (पृ० ५७)
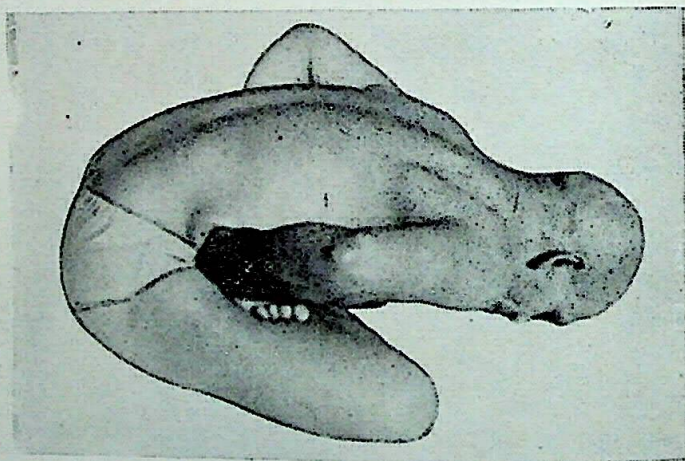
योगमुद्रा (पृ० ८८)

योगनिद्रासन (पृ० ६५)
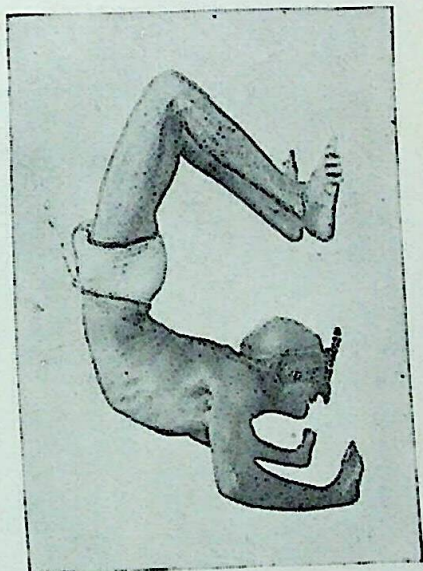
चक्रासन (पृ० ५२)
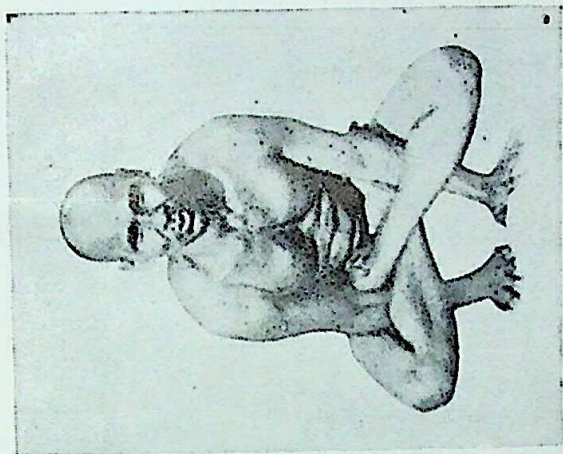
कुक्कुटासन (पृ० ५६)

ऊर्ध्वं पद्मासन (पृ० ६)

पर्वतासन (पृ० ५)

कन्दपीडासन (पृ० ६०)

उत्कटासन (पृ० ६२)
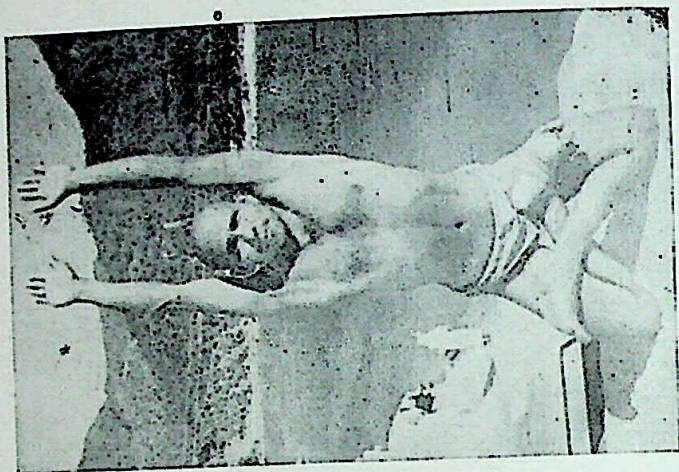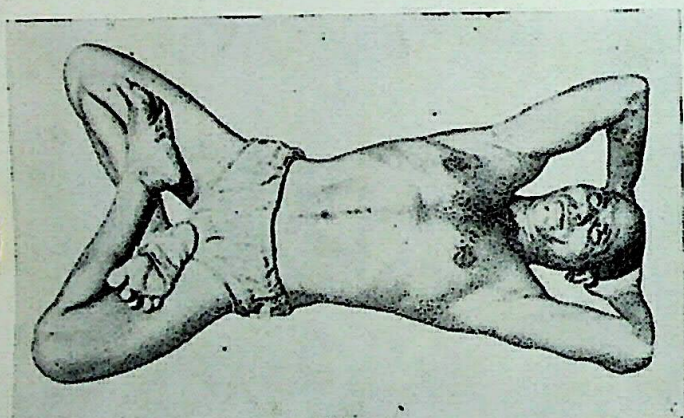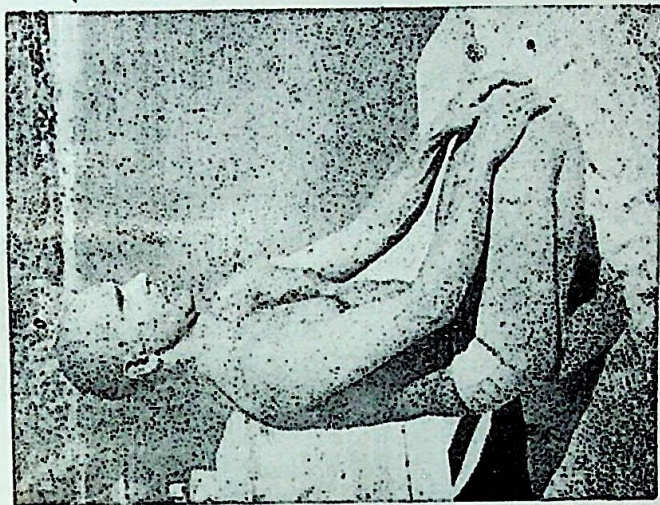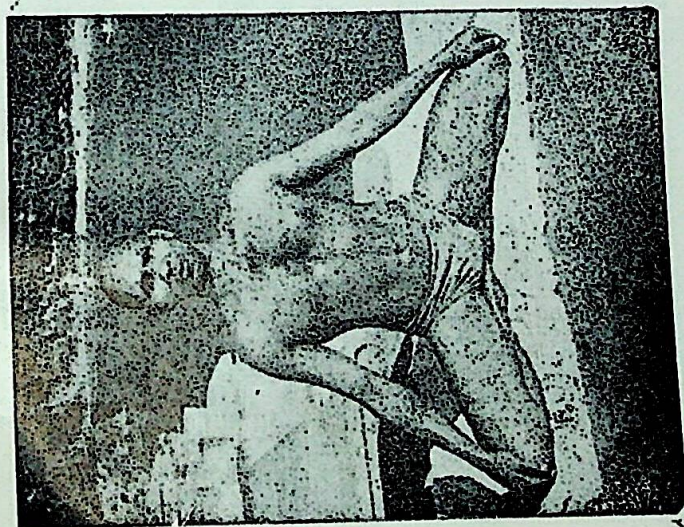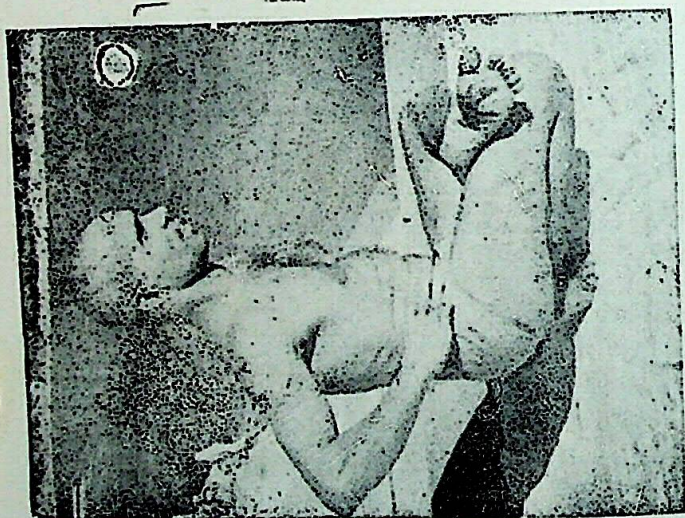
पादांगुष्ठासन (पृ० ४३)
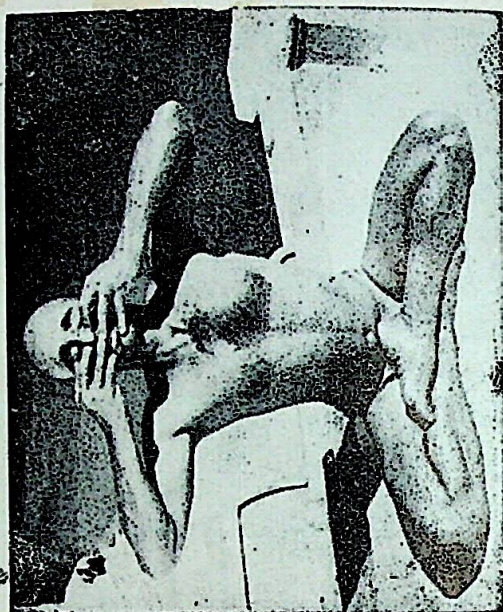
बद्धयोन्यासन (पृ० ८)
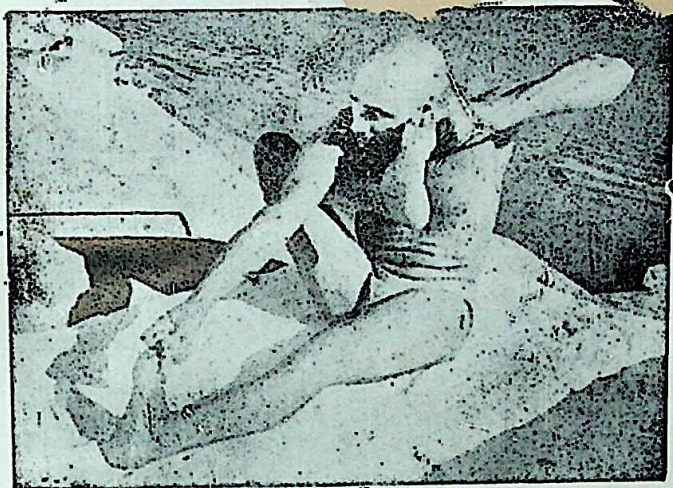
आकर्षण-धनुरासन (पृ० ३४)

सुप्त वज्रासन (पृ० ३६)

सुखासन (पृ० ८)

बद्ध-पद्मासन (पृ० ४६)

भद्रासन (पृ० ६४)

वृश्चिकासन (
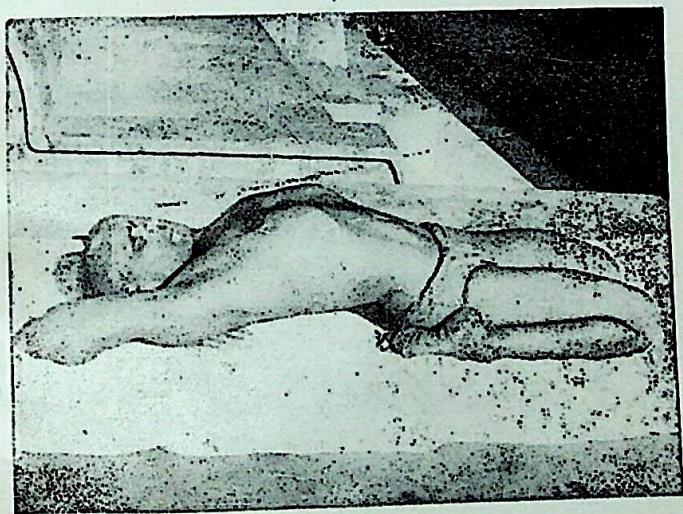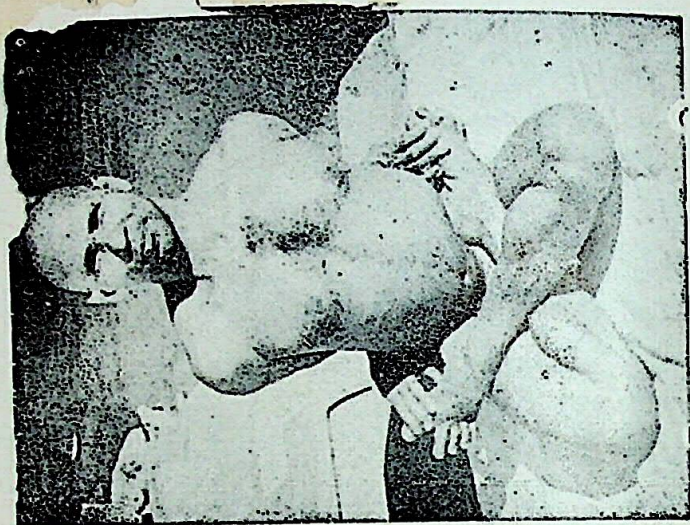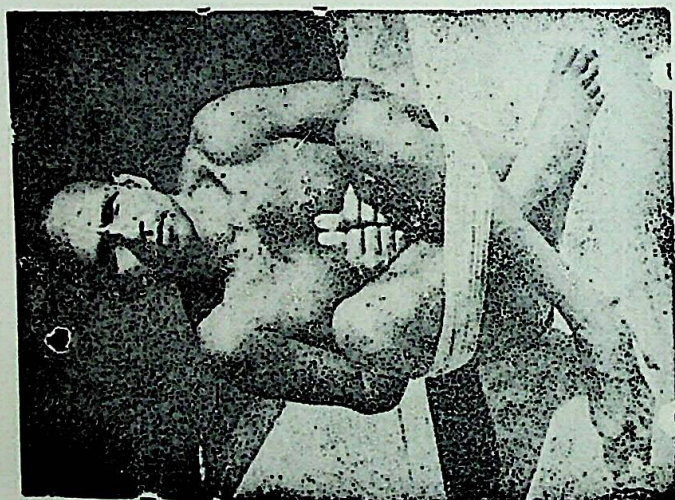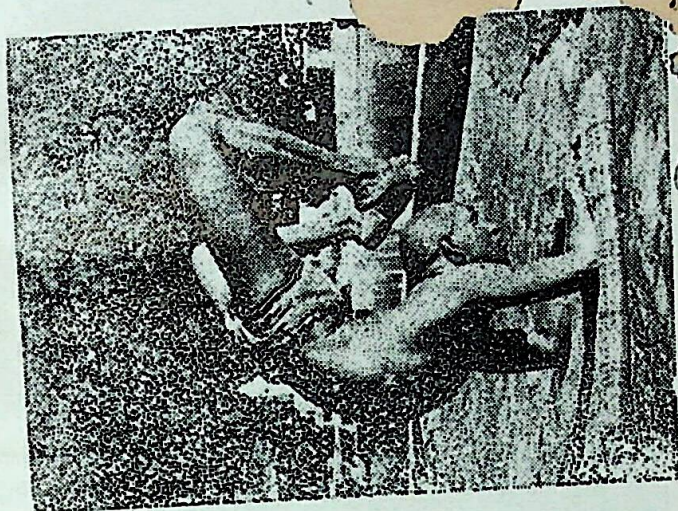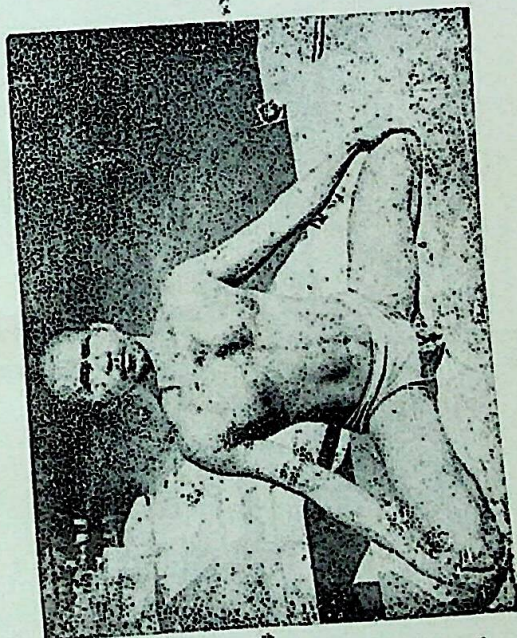
भुजङ्गासन (पृ० ३१)
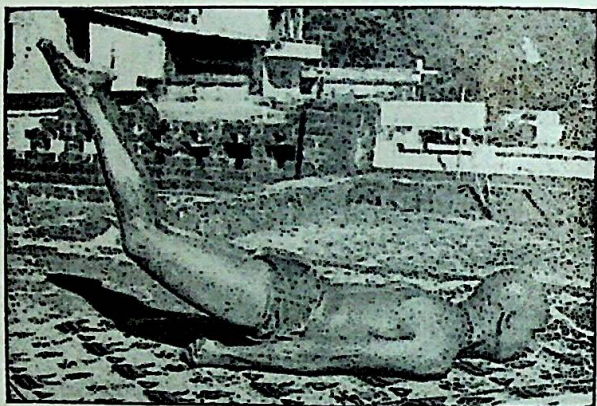
शलभासन (पृ० २९)
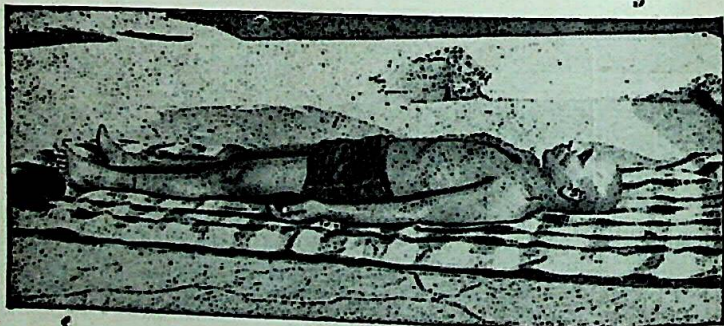
शवासन (पृ० ५४)
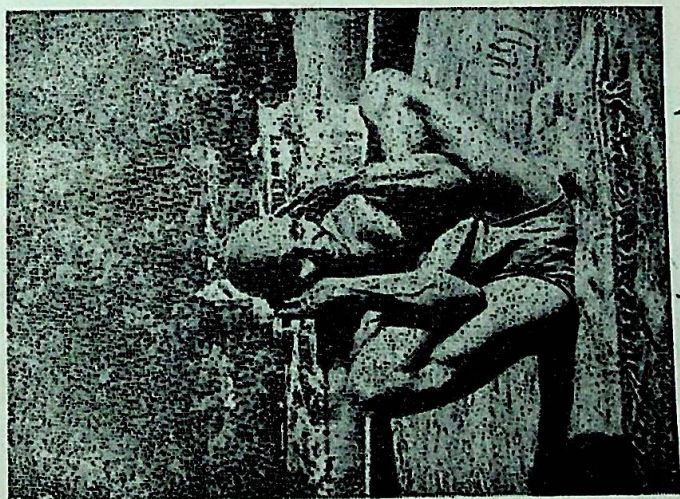
गर्भासन (पृ० ५८)
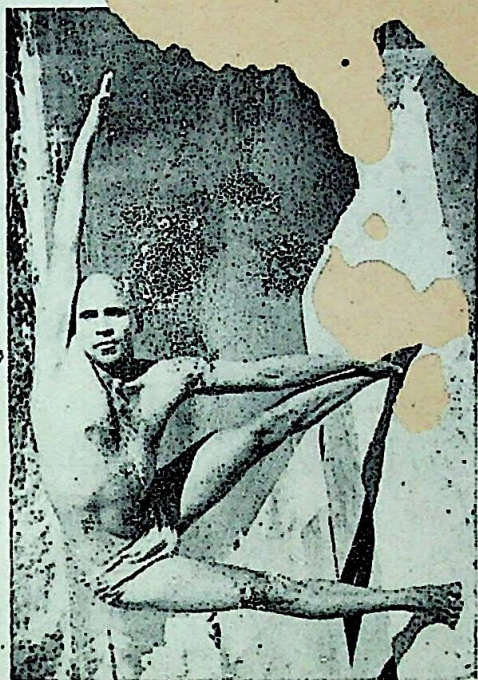
त्रिकोणासन (पृ० ४.
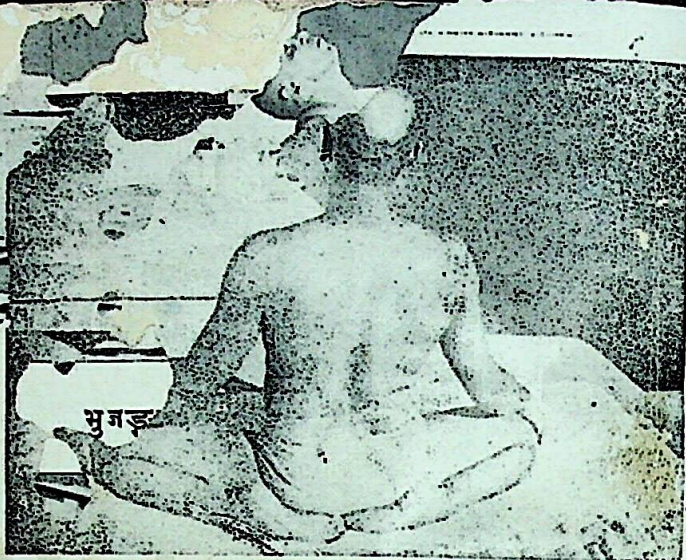
भुजङ्ग

मण्डूकासन (पृ० ३९)
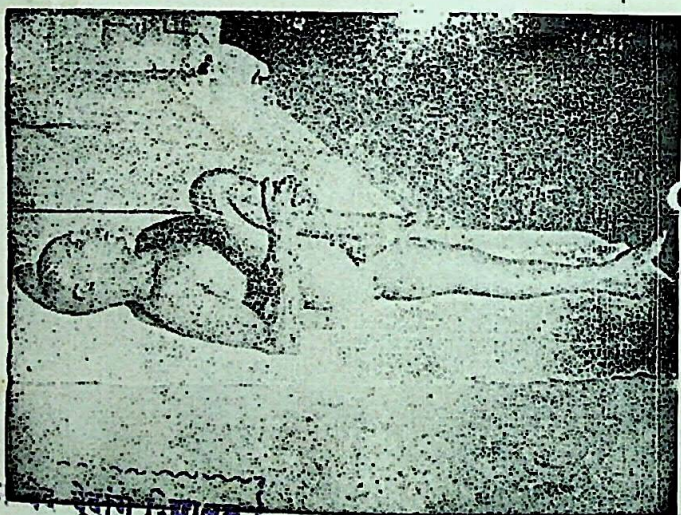
दक्षिण पवनमुक्तासन (पृ० १०)

श्री स्वामी शिवानन्द

(लेखक का संक्षिप्त जीवन-विवरण)

आपका जन्म ८ सितम्बर सन् १८८७ में हुआ था। आपके पूर्वजों में कई सन्त-महात्मा हो चुके हैं; अतः ईश्वर-भक्ति, पवित्रता, शास्त्रों का ज्ञान, दया, निस्स्वार्थ सेवा, त्याग आदि आप-में स्वाभाविक गुण थे।

प्रारम्भिक जीवन में आपने मलेशिया स्टेट्स में चिकित्सा-कार्य के द्वारा दश वर्ष तक जन-सेवा की। अपने सेवा-कार्य को और विस्तृत बनाने के लिए सन् १९२४ में आप भारत वापस आ गये और इस अनित्य संसार का त्याग कर संन्यास ग्रहण किया। ऋषिकेश के निकट दश वर्ष तक शास्त्राध्ययन तथा उग्र तपस्या कर आत्म-साक्षात्कार प्राप्त किया। आप ज्ञानयोग, हठ-योग, राजयोग तथा कुण्डलिनी-योग में पूर्ण निष्णात थे। आप सत्-चित् तथा आनन्दस्वरूप जीवन्मुक्त थे। आप सच्चे कर्मयोगी थे। आपने सन् १९३६ में दिव्य जीवन सङ्घ तथा सन् १९४८ में योग-वेदान्त-आरण्य-अकादमी की स्थापना की जिसके द्वारा आप संसार को कर्म, भक्ति, ज्ञान तथा शान्ति [illegible] पहुँचाते थे। आपके आश्रम में अनेक पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन [illegible] यह दिव्य जीवन-सन्देश भारत के कोने-कोने [illegible] में भी सुचारु रूप में पहुँच चुका है। आपके आश्रम [illegible] आजकल [illegible] देशान्तर के लोग दर्शन तथा सत्सङ्ग का लाभ उठाने के लिए असा-धारण संख्या में आते हैं। विदेश से अनेक साधकों ने यहाँ पर आ कर अध्यात्म की शिक्षा ग्रहण की है। आपके आश्रम में अनेक पण्डित, विद्वान्, महात्मा तथा भक्त आ कर अपने उपदेशों द्वारा साधकों को लाभान्वित करते हैं। भारत की प्राचीन संस्कृति के पुनरुत्थान के लिए आपका आश्रम अपने ढङ्ग का एक है।

पूज्य श्री स्वामी जी जुलाई १९६३ में महासमाधि में लीन हुए।